मूल्यः ₹ 50/- मात्र

महाप्रभु जगन्नाथजी के वेष

भारतीय संस्कृति की एक अद्वितीय पुस्तक

लेखकः अशोक पाण्डेय

पुरी धाम के गोवर्द्धन पीठ के पीठाधीश्वर

एवं

145वें शंकराचार्य

जगतगुरु परमपाद स्वामी

निश्चलानन्द सरस्वतीजी महाराज

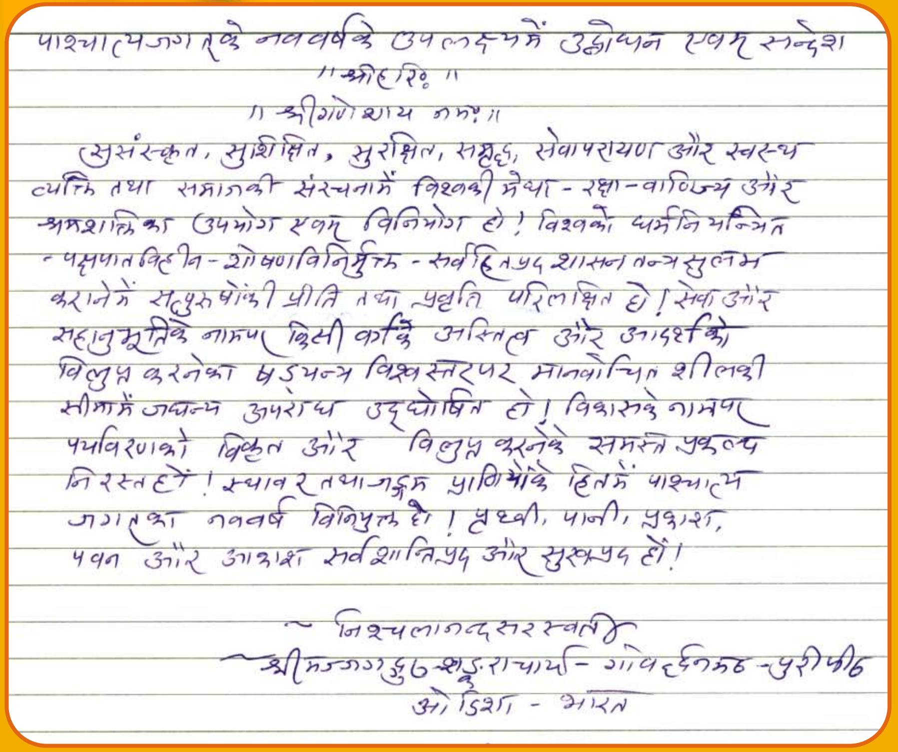

पाश्चात्यजगत्के नववर्षके उपलक्ष्यमें उद्बोधन एवम् सन्देश

॥ श्रीहरिः ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

सुसंस्कृत, सुशिक्षित, सुरक्षित, समृद्ध, सेवापरायण और स्वस्थ व्यक्ति तथा समाजकी संरचनामें विश्वकी मेधा-रक्षा-वाणिज्य और श्रमशक्तिका उपयोग एवम् विनियोग हो! विश्वको धर्मनियन्त्रित-पक्षपातविहीन-शोषणविनिर्मुक्त-सर्वहितप्रद शासनतन्त्र सुलभ करानेमें सत्पुरुषोंकी प्रीति तथा प्रवृत्ति परिलक्षित हो! सेवा और सहानुभूतिके नामपर किसी वर्गके अस्तित्व और आदर्शको विलुप्त करनेका षड्यन्त्र विश्वस्तरपर मानवोचित शीलकी सीमामें जघन्य अपराध उद्घोषित हो! विकासके नामपर पर्यावरणको विकृत और विलुप्त करनेके समस्त प्रकल्प निरस्त हों! स्थावर तथा जङ्गम प्राणियोंके हितमें पाश्चात्य जगत्का नववर्ष विनियुक्त हो! पृथ्वी, पानी, प्रकाश, पवन और आकाश सर्वशान्तिप्रद और सुखप्रद हों!

~ निश्चलानन्दसरस्वती

~ श्रीमज्जगद्गुरु शङ्कराचार्य - गोवर्द्धनमठ - पुरीपीठ

ओडिशा - भारत

लेखक परिचय

अशोक पाण्डेय

आजीवन जगन्नाथ भक्त

1 जनवरी, 1952 में बिहार प्रांत के बक्सर जिले के 'पाण्डेय भरवली' नामक गाँव के रहने वाले अशोक पाण्डेय, 2013 दिसंबर में केन्द्रीय विद्यालय संगठन, नई दिल्ली की लगभग 32 साल की नियमित सेवाएँ संपन्न कर केन्द्रीय विद्यालय नं. 6, पोखरीपुट (भुवनेश्वर) से प्रिंसिपल प्राचार्य के पद से सेवानिवृत्त होकर ओडिशा की राजधानी भुवनेश्वर श्रीरामविहार अपार्टमेंट, ए-203 में स्थाई रूप से रह रहे हैं। आप पुरी धाम के गोवर्द्धन पीठ के पीठाधीश्वर एवं 145वें शंकराचार्य जगतगुरु परमपाद स्वामी निश्चलानन्दजी सरस्वती महाराज के संयुक्त सचिव हैं। आपकी उल्लेखनीय एवं असाधारण शैक्षिक सेवाओं के लिए आपको 2006 में राष्ट्रपति पुरस्कार समेत अनेक पुरस्कार मिल चुके हैं। आप 1999 से लेकर 2002 तक केन्द्रीय विद्यालय मॉस्को में हिन्दी पी.जी.टी. और जवाहरलाल नेहरू कल्चरल संटर, भारतीय दूतावास मॉस्को में हिन्दी व्याख्याता के रूप में काम कर चुके हैं। आपके आजीवन ओडिशा, भुवनेश्वर में रहने के मात्र दो ही आधार हैं- एक तो आप एक सच्चे जगन्नाथ भक्त हैं जो आजीवन जगन्नाथजी के ऊपर हिन्दी में किताब लिखना चाहते हैं और दूसरा यह कि आप के जीवन के प्रेरणास्रोत भुवनेश्वर कीट-कीस और कलिंग टेलीविजन के संस्थापक प्रो. डॉ. अच्युत सामंत हैं जिनके विदेह निःस्वार्थ जीवन को अपनी हिन्दी रचनाओं के माध्यम से समस्त हिन्दी-जगत को अवगत कराना चाहते हैं जो वास्तव में अनन्य जगन्नाथ भक्त हैं।

हिन्दी में आपकी प्रकाशित रचनाएँ

1. रामराज्य, 2. नवकलेवर और रथयात्रा, 3. महाप्रभु जगन्नाथ, 4. भारतीय संस्कृति को ओडिशा की देन, 5. महाप्रसाद, 6. जगन्नाथजी के विभिन्न वेश

सम्पर्क-सूत्र: 08895267920 **Website: www.mahaprabhu.in**

महाप्रभु जगन्नाथजी के वेष

भारतीय संस्कृति की एक अद्वितीय पुस्तक

लेखक
अशोक पाण्डेय

प्रकाशकः
रामा पब्लिकेशन्स
नई दिल्ली

जगत के नाथ श्री जगन्नाथ जी के बारे में
विस्तार से जानने के लिए कृपया लॉगइन करें:
www.mahaprabhu.in

महाप्रभु जगन्नाथजी के वेष

© लेखक

द्वितीय संस्करण: 2019

मूल्य: ₹ 50/- मात्र

लेखक: अशोक पाण्डेय
Website: www.mahaprabhu.in
E-mail: ashok.pandey.pandey630@gmail.com

प्रकाशक: रामा पब्लिकेशन्स
एच-3/26, बंगाली कॉलोनी,
महावीर एन्क्लेव, नई दिल्ली-45
फोन: 09313553434, 09311353434
E-mail: ramapublications@gmail.com

MAHAPRABHU JAGANNATH JI KE VESH

© Author

2nd Edition : 2019

Price : ₹ 50/- only

Author : Ashok Pandey
Website: www.mahaprabhu.in
E-mail: ashok.pandey.pandey630@gmail.com

Publisher : **Rama Publications**
H-3/26, Bengali Colony,
Mahavir Enclave, Palam,
New Delhi-110045
Ph.: 09313 55 3434, 09311 35 3434
E-mail: ramapublications@gmail.com

लेखक की कलम से

'महाप्रभु जगन्नाथजी के वेष' के द्वितीय सफल प्रकाशन का पूरा श्रेय भारत के उन समस्त जगन्नाथ भक्तों को जाता है जो संसार के स्वामी, जगत के नाथ महाप्रभु जगन्नाथ के दिव्य विग्रह-दर्शन के लिए श्रीक्षेत्र पुरी धाम आते हैं और वहाँ के सिंहद्वार पर उपलब्ध मेरी रचनाओं को खरीदकर पढ़ते हैं। जगन्नाथ संस्कृति का मैं कोई ज्ञाता नहीं हूँ, ना ही मैं अपने आपको जगन्नाथ संस्कृति का कोई विद्वान अथवा लेखक मानता हूँ। भगवान जगन्नाथजी की असीम कृपा मेरे ऊपर निश्चित रूप से है, ऐसा मैं मानता हूँ।

ओडिशा के शंखक्षेत्र पुरी धाम के श्रीमंदिर के रत्नसिंहासन पर विराजमान चतुर्धा देव विग्रहों को पिछले लगभग 27 वर्षों से अपनी आँखों से देखने का मुझे सौभाग्य मिला और दूरदर्शन से रथयात्रा के सीधे प्रसारण में कमेंट्री करने का जो मुझे अवसर मिला, बस उसी की यह लिपिबद्ध उपलब्धि है- **'महाप्रभु जगन्नाथजी के वेष'**।

जगन्नाथ संस्कृति पर कुछ लिखने हेतु दिव्य आशीष और मार्गदर्शन मुझे श्रीपुरी धाम के गोवर्द्धनपीठ के 145वें पीठाधीश्वर जगतगुरु शंकराचार्य परमपाद स्वामी निश्चलानन्द जी सरस्वती महाराज से ही मिला। जगन्नाथ जी के प्रथम सेवक पुरी के गजपति महाराजा परमपूज्य श्री दिव्य सिंहदेवजी महाराज का सुझाव भी इस पुस्तक-लेखन में मुझे प्राप्त हुआ। 'आधुनिक भारत के आलोक पुरुष: प्रो. अच्युत सामंत' (संस्थापक: कीट-कीस) के सान्निध्य ने मेरे लेखन कार्य को एक नई चेतना प्रदान की। यह 'जगन्नाथ-सत्संग' का ही प्रतिफल है कि मैं अपनी रचना 'महाप्रभु जगन्नाथजी के वेष' के इस नवीन संस्करण को आप जगन्नाथ भक्तों के हाथों में सौंप रहा हूँ।

पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिए रामा पब्लिकेशन व 'दिव्य वैदिक संदेश' के प्रधान संपादक श्री विजेन्द्र गोयल के प्रति मैं आभारी हूँ जो पिछले लगभग 27 वर्षों से मेरी सभी पुस्तकों का प्रकाशन एक अनन्य जगन्नाथ भक्त के रूप में करते आ रहे हैं। उनके विषय में यह तो बिलकुल सच है कि पहले वे जगन्नाथ भक्त नहीं थे, लेकिन जब से मेरी पुस्तकों का प्रकाशन आरंभ किया, तब से वे भगवान जगन्नाथजी के अनन्य भक्त बन गये और भगवान जगन्नाथ जब भी उनको बुलाते हैं तो श्रीधाम पुरी में आकर जगन्नाथ भगवान के दिव्य दरबार में घंटों बैठे रहते हैं।

यह अनन्य जगन्नाथ भक्तों की सच्ची आस्था, भक्ति और विश्वास ही है, जिससे मुझ जैसे सामान्य लेखक की पहचान जगन्नाथ भक्त के रूप में बनती है। भक्तों के रचनात्मक सुझावों की मुझे प्रतीक्षा रहेगी।

जय जगन्नाथ!

वि. सं. 2076, वर्ष प्रतिपदा — अशोक पाण्डेय
6 अप्रैल 2019

भारत राष्ट्र के आध्यात्मिक दिव्य पुरुष पूज्यपाद स्वामी निश्चलानंदजी सरस्वती महाराज शंकराचार्य, पुरी धाम (ओडिशा) का नववर्ष 2014 का समस्त भारतवासियों के नाम पावन संदेश

पाश्चात्यजगत्‌के नववर्षके उपलक्ष्यमें उद्बोधन एवम् सन्देश

॥ श्रीहरिः ॥

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

सुसंस्कृत, सुशिक्षित, सुरक्षित, समृद्ध, सेवापरायण और स्वस्थ व्यक्ति तथा समाजकी संरचनामें विश्वकी मेधा - रक्षा - वाणिज्य और श्रमशक्तिका उपयोग एवम् विनियोग हो! विश्वको धर्मनियन्त्रित - पक्षपातविहीन - शोषणविनिर्मुक्त - सर्वहितप्रद शासनतन्त्र सुलभ करानेमें सत्पुरुषोंकी प्रीति तथा प्रवृत्ति परिलक्षित हो! सेवा और सहानुभूतिके नामपर किसी वर्गके अस्तित्व और आदर्शको विलुप्त करनेका षड्यन्त्र विश्वस्तरपर मानवोचित शीलकी सीमामें जघन्य अपराध उद्घोषित हो! विकासके नामपर पर्यावरणको विकृत और विलुप्त करनेके समस्त प्रकल्प निरस्त हों! स्थावर तथा जङ्गम प्राणियोंके हितमें पाश्चात्य जगत्‌का नववर्ष विनियुक्त हो! पृथ्वी, पानी, प्रकाश, पवन और आकाश सर्वशान्तिप्रद और सुखप्रद हों!

– निश्चलानन्दसरस्वती
– श्रीमज्जगद्गुरु शङ्कराचार्य - गोवर्द्धनमठ - पुरीपीठ
ओडिशा - भारत

पुरी के शंकराचार्य जगतगुरु स्वामी निश्चलानंदजी सरस्वती का संदेश मानवाधिकार पर

पुरी के शंकराचार्य जगतगुरु स्वामी निश्चलानंदजी सरस्वती ने अपने मानवाधिकार के संदेश में यह बताया कि सबके प्रति हित की भावना से स्नेह और सहानुभूति मानवोचित शील है। भारत के बहुसंख्यक वर्ग के अस्तित्व और आदर्श को विलुप्त करने वाले अधिनियम मानवाधिकार की सीमा में पारित तथा क्रियान्वित करने योग्य हों। जिस वर्ग का परंपरा प्राप्त भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात, उत्सव, त्यौहार, रक्षा, सेवा, न्याय, विवाह आदि दार्शनिक, वैज्ञानिक और व्यावहारिक धरातल पर सर्वोत्कृष्ट है केवल उस वर्ग से संबद्धता के कारण ही मानवाधिकार की सीमा में कैसे लांछित और तिरस्कृत करने योग्य माना जा सकता है? किसी वर्ग को और उससे संबद्ध व्यक्ति को राष्ट्रीय स्तर पर अल्पसंख्यक होने मात्र से मानवता तथा राष्ट्रीयता के लिए अभिशाप रूप किसी अधिनियम के अन्तर्गत उपद्रव करने की पूर्ण अथवा आंशिक स्वतंत्रता कैसे प्रदान की जा सकती है? भारतीय संविधान के अनुच्छेद 25 में जिस प्रकार पूर्वजन्म, ओंकार, स्वस्तिक, गोवंश और गंगा आदि आस्थान्वित सिख, जैन, बौद्ध को छल, बल, डंके की चोट से अल्पसंख्यक उद्घाषित कर हिंदुओं को अल्पसंख्यक बनाने का प्रकल्प आदि चलाया जा रहा है उसे आज बंद करने और निरस्त करने की आवश्यकता है। मानवता के पक्षधर क्रिश्चियन, मुस्लिम तथा कम्यूनिस्ट तंत्रों को भी ऐसे घातक तत्वों से सावधान रहने की आवश्यकता है।

– अशोक पाण्डेय

परम पूज्य स्वामी निश्चलानंदजी सरस्वतीजी की अनोखी पहल: श्री जगन्नाथ पंचरात्र महोत्सव

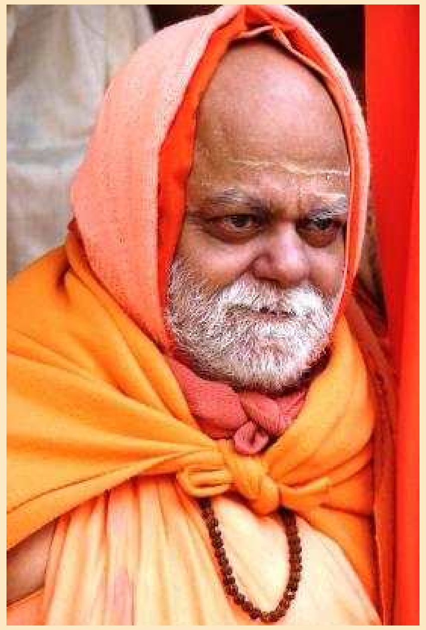

स्वामीजी की पहल पर पहली बार पुरी धाम में दिनांक 09 फरवरी, 2012 से दिनांक 14 फरवरी, 2012 तक विश्व के समस्त जगन्नाथ मंदिर प्रमुखों का 6 दिवसीय समागम हुआ जिसमें विश्व के लगभग 1000 साधु-संतों का अद्वितीय समागम हुआ। इस समागम का नाम दिया गया **'श्री जगन्नाथ पंचरात्र महोत्सव'**। इसके आयोजन का उद्देश्य पूरे विश्व में जगन्नाथ संस्कृति का श्रीमद्भागवत कथा, रामकथा, श्रीकृष्ण कथा आदि की तरह जगन्नाथजी की कथा भी वर्ष भर कम से कम 5 दिवस, 7 दिवस, 9 दिवस और 11 दिवस तक जाने माने श्रीजगन्नाथ व्यास से कराई जाये। साथ ही साथ श्रीजगन्नाथ मंदिर की मान्य रीति-नीति की तरह ही श्री जगन्नाथजी की दिनचर्या, पूजा-पाठ, भोग और पर्व-त्यौहार आयोजित हो। विश्व प्रसिद्ध रथयात्रा, बाहुड़ा यात्रा और सोना वेष आदि के आयोजन की तारीख वहीं हों जो पुरी धाम के जगन्नाथ मंदिर की हर साल रहती हैं।

श्री जगन्नाथ मंदिर प्रशासन, पुरी धाम ने इस जिम्मेदारी को वहन किया जिसमें मार्गदर्शन मिला पुरी धाम के शंकराचार्य पूज्य पूज्य स्वामी श्री श्री निश्चलानंदजी सरस्वती का एवं पुरी के गजपति महाराज श्री श्री दिव्यसिंहदेवजी का। सहयोगी संत-महात्माओं में पूज्य स्वामी निर्लिप्तानंद सरस्वती, पूज्य बाबा चैतन्य चरण दास, पूज्य बाबा सच्चिदानंद दास, प्रो. डॉ. आलेख चरण सारंगी,

पूज्य स्वामी परमहंस प्रज्ञानंद दास, पूज्य स्वामी माधवानंद सरस्वती, पूज्य स्वामी निगमानंद सरस्वती, पूज्य बाबा किशोरी चरण दास, पूज्य स्वामी परिसुधानंद, पूज्य स्वामी शिवचितानंद, पूज्य स्वामी धर्मप्रकाशानंद, पूज्य स्वामी असीमानंद सरस्वती, श्री प्रदीप्त कुमार महापात्र, (मुख्यप्रशासक, पुरी श्रीमंदिर), प्रो. डॉ. नीलकण्ठ पति जबकि मुख्य यजमान रहे उद्योगपति एवं सच्चे समाजसेवी श्री सुरेंद्र कुमार डालमिया।

इस अवसर पर एक स्मारिका का भी विमोचन किया गया। साथ ही साथ यह भी सुनिश्चित किया गया कि श्रीमंदिर प्रशासन पुरी की ओर से श्रीजगन्नाथजी की दिनचर्या एवं पूजन विधि आदि की एक मान्य रचना देवनागरी लिपि में प्रकाशित की जाय जिसके आधार पर पूरे विश्व के जगन्नाथ मंदिरों में श्रीजगन्नाथजी की पूजा आदि में एकरूपता बनी रहे। यह आयोजन पूरी तरह से कामयाब रहा।

भारत के अनन्यतम धाम पुरी धाम के शंकराचार्य एवं पुरी गोवर्द्धनपीठ के 145वें पीठाधीश्वर परम पूज्य श्रीजगतगुरु शंकराचार्य स्वामी निश्चलानंदजी सरस्वतीजी महाराज का नववर्ष 2014 का समस्त भारतवासियों के नाम पावन संदेश

''संदेश नहीं मैं स्वर्ग का लाया, भूतल को स्वर्ग बनाने आया।''

स्वर्गीय राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तजी की ये पंक्तियाँ नई सदी के वास्तविक संन्यासी, मनीषी, विदेह, त्यागी, तपस्वी एवं भारतीयता की रक्षा करने वाले पुरी धाम के शंकराचार्य परम पूज्य श्रीजगतगुरु शंकराचार्य के साथ अक्षरशः चरितार्थ हो रही है।

स्वामीजी का यह भी मानना है-

''निज हेतु बरसता नहीं व्योम से पानी,
हम हों समष्टि के लिए व्यष्टि-बलिदानी।''

स्वामीजी समष्टि के हित के लिए व्यष्टि का बलिदान चाहते हैं और यही भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र भी है। आप सदा यह चाहते हैं कि भारत विश्व आध्यात्मिक चेतना का केन्द्र बिंदु बना रहे। शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य अर्थ और काम न हो। आपको जननी, जन्मभूमि से अटूट लगाव है। आपको भारतदेश की सुरक्षा, कल्याण, भारतीय संस्कृति को बचाये रखने एवं आध्यात्मिक चेतना को बचाये रखने की चिंता है।

आपका आविर्भाव आर्यावर्त की मिथिलांचल पावन धरा-धाम पर हुआ जहाँ पर विदेह राजा जनक, जनकनंदिनी श्री सीता, गौतम बुद्ध, कणादि, कुमारिल, मण्डन, वाचस्पति, शंकर मिश्र, उदयन, गणेश उपाध्याय, मैथिल कोकिल विद्यापति, गार्गी, मैत्रेयी, सुलभा, उभयभारती आदि का आविर्भाव हुआ था। बौद्ध धर्म के प्रवर्तक भगवान बुद्ध का हुआ था। आप जब 2 साल के थे तो रात के बारह-बारह बजे तक जगकर पढ़ते थे, आप 6 साल के बाल्यकाल से ही भारतीय धर्म, दर्शन और अध्यात्म से जुड़ गये। जब आप 10 साल के हुए तभी से आपका मन संन्यासी जीवन में रम गया और उसी समय आपने समस्त वेदों, पुराणों, उपनिषदों, रामायण और महाभारत पढ़ डाली। एक बार बचपन में आपने सपना देखा कि आपके गांव के समीप के भगवान श्रीकृष्ण मंदिर से भगवान का आभूषण चोरी हो गया है और सुबह जब देखा गया तो सचमुच भगवान का कीमती आभूषण चोरी हो गया था। कहते हैं कि आपके बाल्यकाल में ही भगवान श्रीकृष्ण ने स्वयं आपके सम्मुख प्रकट होकर आपके कंधों पर हाथ रखकर आपको अपना सखा स्वीकार किया था। कल क्या होने वाला है इसकी जानकारी आपको अपनी साधना और दिव्यशक्ति से हो जाती है। आप पिछले 50 सालों से महाप्रभु श्री जगन्नाथजी महाराज के देश के संस्कृति पुरुष रहे हैं। सहजता एवं वितरागी जीवन आपकी पहचान रही। आप भारतीय संस्कृति की पर्याय बन चुकी जगन्नाथ संस्कृति के प्रचारक हैं। श्रीमंदिर में रथयात्रा, देवस्नानपूर्णिमा और बाहुड़ा यात्रा में प्रभु की प्रथम सेवा का पूर्ण अधिकार है। आप पुरी गोवर्द्धन पीठ के पीठाधीश्वर हैं जहाँ के मुख्य देव भगवान श्री जगन्नाथजी और माता विमलाजी मुख्य देवी हैं।

आप भारतीय आध्यात्मिक चेतना के पुरोधा, ऋग्वेद के अनुपालक, श्रीजगन्नाथ संस्कृति के यथार्थ आदर्श एवं भारतीय युवा विवेक के निर्माता हैं। आपने अपने एक प्रवचन में बड़ी विनम्रता, विलक्षणता एवं शालीनता के साथ यह बताया कि आज की शिक्षा व्यवस्था पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित हो चुकी है जहाँ पर जीवन के शाश्वत जीवन मूल्यों, नैतिक मूल्यों एवं सामाजिक मूल्यों का ह्रास हो चुका है। आज की शिक्षा व्यवस्था पूरी तरह से अर्थ और काम तक सीमित होकर रह गई है। आज के बच्चे नहीं जानते कि भारतीयता क्या है और

हमारे संस्कार क्या हैं? ऐसे में आज के युवावर्ग को अपने बड़े-बुजुर्गों का आदर करना, शाश्वत जीवन मूल्यों पर आधारित साधु-संतों के प्रवचन आदि को सुनना चाहिए। उन्होंने बताया कि आज के प्रजातंत्र की अवधारणा बदल चुकी है। आज न वशिष्ठ जैसा गुरु है और न ही राम जैसा छात्र। ऐसे में सबसे बड़ी आवश्यकता इस बात की है कि आज के युवावर्ग को दिशाहीन होने से बचाने की है और यह तभी संभव है जब आज के युवा इस बात को स्वीकार करें कि उनका सर्वांगीण विकास भारतीयता को अपनाकर आगे बढ़ने में ही है। उन्होंने भारतीय संयुक्त परिवार की टूटती दशा पर चिंता व्यक्त करते हुए आज के अन्तरजातीय विवाह के बढ़ते प्रचलन को दोषी बताया। जैसा कि विदित हो कि स्वामीजी न केवल जगन्नाथ संस्कृति के प्रचारक हैं अपितु भारतीय आध्यात्मिक चेतना के प्राण, भारतीय राष्ट्रीय विवेक के निर्माता भी हैं जिनके आचरण, व्यवहार एवं पारदर्शी उज्ज्वल व्यक्तित्व में समाज को बचाने की प्रेरणा समाहित है।

प्राप्त जानकारी के आधार पर पुरी गोवर्द्धनपीठ का निर्माण आज से लगभग 2500 साल पहले हो चुका था जबकि पुरी धाम के श्रीमंदिर का निर्माण 1215 में हुआ। आपकी चिंता आज के व्यक्ति, समाज, शिक्षा, स्वास्थ्य, समाजसेवा, सरकार, प्रजा, गुरु, शिष्य, शाश्वत जीवन मूल्य, नैतिक मूल्य, प्रजातांत्रिक मूल्य, योग साधना, ध्यान, चिंतन, मनन, वेदपाठ, गौरक्षा, साधु-संतों की सुरक्षा, भारत के तीर्थस्थलों की सुरक्षा एवं साफ-सफाई, कर्त्तव्यबोध, शक्तिबोध, व्यावहारिक ज्ञान, शिष्टाचार, सहयोग, मैत्री और सही संस्कार आदि की है।

अशोक पाण्डेय, भुवनेश्वर
पुरी गोवर्द्धन पीठ परिषद के संयुक्त सचिव

श्रीजगतगुरु शंकराचार्य स्वामी निश्चलानंदजी सरस्वतीजी महाराज के प्रवचन के कुछ अंश

17 दिसंबर, 2012 को उद्योगपति, समाजसेवी श्री किशन लालजी भरितया के कटक निवासस्थल महानदी विहार में दिये गये आपके प्रवचन के कुछ अंश-

सर्व प्रथम उपस्थित सैकड़ों अनुयायियों द्वारा स्वामीजी की दिव्य चरण पादुका का पूजन हुआ। स्वामीजी की वंदना, गुरु-वंदना एवं जगन्नाथ स्वामी की वंदना के उपरांत स्वामीजी का अभिवादन मुख्य यजमान श्री किशनलाल भरितया तथा पुरी गोवर्द्धन पीठ परिषद के संयुक्त सचिव श्री अशोक पाण्डेय ने किया। स्वामीजी की अध्यात्म सेवा और देश-विदेश में उनकी आध्यात्मिक साधना और प्रवचनों का अधिक से अधिक लाभ विश्व मानवता को मिले ऐसी कामना दोनों अनुयायियों ने की। व्यासपीठ पर विराजमान जगतगुरु स्वामी निश्चलानंद सरस्वती ने बताया कि वे हाल ही में एक सप्ताह पूर्व नेपाल भगवान बुद्ध की जन्मस्थली के समीप रामनगर गये हुए थे, जहाँ पर उनके आध्यात्मिक प्रवचन को नेपाल के लगभग 3.5 लाख लोगों ने सुना जिनमें हिन्दू, मुस्लिम और ईसाई तीनों थे। नेपाल विश्व का एकमात्र ऐसा हिन्दू राष्ट्र है जहाँ पर लगभग 82 फीसदी हिन्दू रहते हैं। उनके साथ मंचासीन बौद्ध, जैन, सिख सभी संत, महात्मा और धर्मगुरुओं ने उनके प्रवचन को ध्यानपूर्वक सुना।

स्वामीजी ने बताया कि नेपाल और भारत का रिश्ता काफी सुदीर्घ रहा है। आज भी पुरी धाम में नेपाल नरेश का श्रीजगन्नाथ मंदिर में दर्शन राजकीय सम्मान के साथ होता है। श्री जगन्नाथजी के शालिग्राम में बहुतायत सहयोग नेपाल का होता है। उसी प्रकार नेपाल भगवान पशुपतिनाथ मंदिर में भी शंकराचार्य को शाही सम्मान का प्रावधान है।

आज किसी भी देश के सुशासन के लिए सुसांस्कृतिक तंत्र, सुसामाजिक तंत्र का होना नितांत आवश्यक है। उन्होंने बताया कि नेपाल में जितने भी संगठन हैं अत्यधिक की राय में नेपाल हिन्दू राष्ट्र के रुप में पूरी तरह विकसित हो जबकि विकास के नाम पर भारत में यह अवधारणा समाप्त होती नजर आ रही है। ऐसे में भारत के सभी हिन्दुओं को मिलकर एक हिन्दू चैनल चलाना चाहिए जहाँ से बाल-संस्कार, समाज-संस्कार, आदर्श संयुक्त परिवार संस्कार, भारतीय संस्कृति पर आधारित शिक्षा-संस्कार, गौरक्षा संस्कार, व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवनोपयोगी संस्कार, कृषि संस्कार, पशुबल संस्कार के साथ साथ नियमित रामायण, महाभारत, पौराणिक कथाओं का नियमित प्रसारण किया जाये। गुरु वशिष्ठ, याज्ञवलक्य, चाणक्य और गुरु करपात्री जी जैसे गुरुओं के जीवन को बच्चों को दिखाया जाये। राम, कृष्ण, एकलव्य और नचिकेता जैसे शिष्यों के आदर्श को प्रदर्शित किया जाये जिनका पूरा लाभ भारत के भावी कर्णधारों और समाज को मिल सके। उन्होंने बताया कि नेपाल में जो सत्ता परिवर्तन हुआ है इसका आभास उनको पहले ही हो चुका था और नेपाल के पूर्व नरेश को दे चुके थे। आज भी उनकी इच्छा है कि नेपाल के समस्त हिन्दू संगठनों की एकजुटता बनी रहे। भारतीय परिप्रेक्ष्य का हवाला देते हुए उन्होंने बताया कि भारत में सुशासनतंत्र हो, जिसके लिए आवश्यकता है यहाँ के सामाजिक तंत्र और सांस्कृतिक तंत्र में एकजुटता की और सामंजस्य की।

उन्होंने बताया कि उनके व्यक्तिगत प्रयासों से दक्षिण में श्रीरामसेतु, अयोध्या में राममंदिर समस्या का समाधान हो पाया। उन्होंने बताया कि वे कभी मरने से नहीं डरते जबकि उनके ऊपर 22 बार मारने का प्रयास हो चुका है और दो बार उन्हें विष देने का प्रयास भी हो चुका है। उन्होंने बताया कि विकास के नाम पर जो कुछ भी विश्व में हो रहा है वह उचित नहीं है। उन्होंने बताया कि उनका पूरा जीवन भारतीय आदर्श आध्यात्मिक प्रचार-प्रसार एवं सांस्कृतिक धरोहर को बचाने में लगा रहेगा। गौरतलब है कि स्वामीजी की अब तक विभिन्न विषयों पर कुल 75 रचनाएं प्रकाशित हो चुकी हैं।

स्वामीजी भारतीय संस्कृति, भारतीय अध्यात्म, गौरक्षा, जीवन के शाश्वत जीवन मूल्यों एवं भारत की शाश्वत आदर्श सामाजिक व्यवस्था को बचाये रखने में अपना

पूरा जीवन व्यतीत करते हैं। एक श्रोता के प्रश्न के उत्तर में स्वामीजी ने बताया कि एक शंकराचार्य के रूप में उन्होंने जो कुछ किया है वह पूरे भारत और विश्व के लिए अभूतपूर्व है चाहे वह श्रीराममंदिर निर्माण की बात अयोध्या में हो या श्रीरामसेतु की रक्षा की बात दक्षिण भारत के रामेश्वरम हो। चाहे धर्मांतरण पर रोक लगाने की बात हो या अन्तर्जातीय विवाह पर अंकुश लगाने की बात। चाहे बाल विवाह की बात हो या कन्याभ्रूण हत्या को रोकने की बात। चाहे गौरक्षा की बात हो या दलाईलामा के विचारों में परिवर्तन की बात। उन्होंने बताया कि दलाईलामाजी उनके व्यक्तित्व से प्रभावित होकर उनके अनुयायी बने हुए हैं।

नेपाल में बाबा गोरखनाथ के नाम पर गोरखा रेजिमेंट गठन और उनका नेपाल में अजातशत्रु के रूप में जाना यह सिद्ध करता है कि पिछले 20 सालों से वे अपने समस्त भौतिक एवं सांसारिक सुखों का त्यागकर मानवता की रक्षा में सदा लगे हुए हैं। आज जिस तरह की असुरक्षा का माहौल देश के साधु-संतों, महात्माओं एवं धर्मगुरुओं का है वह सर्वविदित है। ऐसी स्थिति में देश के लोगों को आपसी सामंजस्य की आवश्यकता है। पुरी धाम में गजपति महाराज से बातों-बातों में वे कहा करते हैं कि आप तो क्षत्रिय होकर भी हमेशा शांति, शांति, शाति और शांति पुकारतें हैं लेकिन मैं तो अपनी जान की परवाह किये बिना भारतीय अध्यात्म की रक्षा के लिए ब्राह्मण होकर भी क्रांति, क्रांति, क्रांति पुकारता हूँ और इसे ही अपने जीवन का संकल्प मानकर साल के कम से कम 250 दिनों तक ओडिशा से बाहर रहकर देश-विदेश में इसे बचाने का प्रयास करता हूँ। अब तो हमारे अनुयायियों को समझ लेना चाहिए कि मैं उनके के लिए क्या करता हूँ और वे भारत के राष्ट्र निर्माण में उनका कितना सहयोग करते हैं।

अशोक पाण्डेय
पुरी गोवर्द्धन पीठ परिषद के संयुक्त सचिव

महाप्रभु जगन्नाथ के एक अनन्य भक्त का संकल्प आजीवन "देने की कला" का प्रचार

17 मई, 2013 से सतत

बात 1969 की है। एक दिन सुबह करीब 5.00 बजे चार साल का एक शिशु यह नहीं समझ पा रहा था कि क्यों उसके परिवार के सभी सदस्य आँसू बहा रहे हैं? वे पूरी तरह क्यों निस्तब्ध एवं शोक संतप्त हैं? वह नादान बालक यह नहीं समझ पा रहा था कि वह करे तो क्या करे? नहीं करे तो क्या नहीं करे? सबको उदास देखकर उसके भी चहरे पर उदासी थी। लेकिन अन्ततोगत्वा वह समझ गया कि उसके पिताजी का असामयिक निधन हो चुका है जबकि वह नहीं जानता था कि 'सांसारिक निधन' क्या होता है? यह उसकी समझ से परे की बात थी। उसके पिताजी का निधन एक दु:खद रेल दुर्घटना में हो गया था। पिताजी उसकी विधवा माँ और उसके कुल 7 भाई-बहनों को असहाय दयनीय हालात में छोड़कर काल-कवलीत हो चुके थे। उस घर का सबसे छोटा सदस्य मात्र एक माह का था जबकि सबसे बड़ा सदस्य 17 साल का। उसके पिताजी एक कारखाने में एक साधारण कर्मचारी थे जो अपने पीछे परिवार के कुल 8 सदस्यों के भरण-पोषण के लिए कुछ भी जमा पूँजी छोड़कर नहीं गये थे। वह शिशु ओडिशा प्रदेश के एक दूर-दराज गाँव में घोर गरीबी की दलदल में पला। जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों ने उसको पल-पल जीना सिखाया। वह शिशु लाचार होकर अपने बाल्यकाल के आनंद का परित्याग कर पाँच साल की उम्र में अपने परिवार के भरण-पोषण का एकमात्र सहारा बन गया। वह यहाँ-वहाँ स्वेच्छापूर्वक कुछ शारीरिक श्रम कर, अर्थोपार्जन कर अपनी विधवा

माँ की सहायता में लग गया। पाँच की उम्र में ही उस बालक को जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियों ने स्वावलंबी बना दिया। अपने श्रम की कमाई से अपनी विधवा माँ की आँखों के आँसू पोंछे। अपनी छोटी बहन को उसकी गोद में सोने जैसा सुख दिया। सात साल की उम्र में ही वह बालक कमाऊ बन गया। वह अपने पसीने की प्रतिदिन की कमाई का एक रुपया स्वयं रखता और बाकी अपने चार सहपाठियों पर उनके नाश्ता-चाय पर खर्च करता था। यही नहीं, समय-समय पर वह अपने गांव के नजदीक के बाजार से सब्जी और रोजमर्रे की सामग्री लाने में अक्सर अपने गांववालों की भी सहायता करता था।

कालांतर में बालक बड़ा हुआ। वह भुवनेश्वर के उत्कल विश्वविद्यालय से एम.एससी. कर रहा था। एक दिन उसके सबसे बड़े भाई ने उसे कॉलेज पिकनिक पर जाने के लिए कुल 300 रुपये दिये, जिसने वह अपने उस साथी को दे दिये जो कालेज पिकनिक पर जाना चाहता था लेकिन उसके पास पैसे नहीं थे। देने की कला में निपुण उस युवा ने उत्कल विश्वविद्यालय भुवनेश्वर से रसायन विज्ञान में एम.एससी किया। स्थानीय कॉलेज में एक व्याख्याता की नौकरी की। अपने व्यक्तिगत सुखों का त्यागकर अपने जरुरतमंद सहपाठियों को आर्थिक सहायता देने एवं अपने परिवार के सदस्यों के भरण-पोषण व उनको पढ़ाने के साथ-साथ प्राइवेट ट्यूशन भी करता। यह बात 1987-1997 की है।

वह दूरदर्शी युवा अपनी कुल जमा पूँजी 5000 रुपये, जो उस वक्त की लगभग 100 अमरीकी डॉलर के बराबर थी, उससे 1992-1993 में किराये के मकान में अपनी दो संस्थाएँ खोल लीं। आज उस उत्साही और त्यागी युवा की दो संस्थाएँ जिनमें एक कीट तकनीकी विश्वविद्यालय है जहाँ पर आज लगभग 21,000 छात्र पूरे भारत और अनेक देशों के पढ़ते हैं। आज कीट भारत की एक गौरवशाली तकनीकी संस्था है। दूसरी संस्था कीस आज पूरे विश्व की सबसे बड़ी अनोखी संस्था बन चुकी है जहाँ पर विश्व के सबसे बड़े आदिवासी आवासीय विद्यालय में कुल 20,000 आदिवासी बच्चे समस्त अत्याधुनिक आवासीय सुविधाओं के साथ रहते हैं और के.जी. से लेकर पी.जी.तक नि:शुल्क पढ़ते हैं। कीस का लक्ष्य है भारत के कुल 10 मिलियन आदिवासी बच्चों को 2020 तक पूरी तरह से शिक्षित बनाना।

जो अनाथ बालक स्वयं घोर आर्थिक संकटों में पला-बढ़ा, वह अपने गांव को भी आज भारत का एक आदर्श गाँव बना चुका है, जहाँ पर आज शहर की तमाम सुविधाएँ उपलब्ध हैं। सच तो यह भी है कि उस उत्साही विदेह युवा ने कला, संस्कृति, फिल्म, साहित्य, अध्यात्म और जीवन के अनेकानेक आवश्यक एवं महत्वपूर्ण क्षेत्रों को अपने ही बलबूते पर समृद्ध बना दिया है। वह कर्मयोगी युवा आज प्रति माह अपने कुल 40 गरीब दोस्तों को रोजगार दिलाने में सहायता करता है जबकि प्रतिमाह अपने अन्य 40 साथियों को अपनी ही विश्व की दो अनोखी संस्थाओं में नौकरी देता है। वह व्यक्ति जिसने सबके लिए इतना कुछ किया, इतना कुछ दिया, वह स्वयं एक सामान्य व्यक्ति का औसत जीवन जीता है। दो कमरे वाले एक किराये के मकान में रहता है। उसके नाम पर आज भी न कोई बैंक खाता है और न ही कोई बैंक बैलेंस। वह आज भी बैचलर लाइफ जी रहा है। उसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य है बिना किसी जाति, लिंग, धर्म के भेद-भाव के बिना हजारों गरीब और असहाय बच्चों की सहायता करना। आर्थिक सहायता करना उसका शौक है। गरीब, लाचार और बेबस बच्चों के चेहरे पर उसे साक्षर बनाकर मुस्कुराहट लाना है। उस व्यक्ति को देने की कला में विश्वास है, शौक है और 17 मई, 2013 से इस ''देने की कला'' का वास्तविक प्रचारक बनकर आजीवन कार्यरत है। सच तो यह भी है कि उस असाधारण व्यक्तित्व के धनी सादगी से परिपूर्ण महामानव को देने की कला विरासत में मिली है जिसे वह मौन रूप में अपने बाल्यकाल से सीखा और अपनाया। वह व्यक्ति जिसका पारदर्शी व्यक्तित्व पूरे विश्व के लिए अनुकरणीय एवं वंदनीय बन चुका है वह कोई और नहीं अपितु कीट-कीस के संस्थापक डॉ. अच्युत सामंत हैं, जिन्हें दुनिया आज निर्विवाद रूप में एक दूरदर्शी शिक्षाविद, विश्व आदिवासी समुदाय का जीवित मसीहा, विश्व का सबसे बड़ा नि:स्वार्थ सच्चा करार कर चुका है और ये कीट-कीस के संस्थापक के साथ-साथ कीस फाउण्डेशन इंडिया और कीस फाउण्डेशन यू के आजीवन संस्थापक हैं।

रूपांतरण: अशोक पाण्डेय

06 अप्रैल, 2019

विषय-सूची

- श्रीजगन्नाथाष्टकम् 18
- अवकाश वेष 21
- बड़सिंहार वेष 23
- सोना वेष 25
- पद्म वेष 26
- गज उद्धार वेष 28
- रघुनाथ वेष 30
- चन्दनलागि वेष 32
- गजानन वेष 34
- घोड़ालागि वेष 36
- नवांक वेष 38
- वनभोजी वेष 39
- कालियादलन वेष 40
- प्रलम्बासुर वध वेष 42
- कृष्ण-बलराम वेष 44
- राधा-दामोदर वेष 46
- लक्ष्मी-नारायण वेष 47
- बाँकाचूड़ा वेष 48
- त्रिविक्रम वेष 49
- लक्ष्मीनृसिंह वेष 51
- सेनापट्टवेष / मकर चौरासी वेष / पुष्याभिषेक वेष 52
- नागार्जुन वेष 53
- नवयौवन वेष 54
- राजराजेश्वर वेष 55
- वामन वेष 56
- सान्ध्य वेष 57
- श्राद्ध वेष 58
- तड़प-उत्तरी वेष / टाहिआलागि वेष 59
- चाचेरी वेष 60
- गिरिगोवर्धन वेष 61

श्रीजगन्नाथाष्टकम्

कदाचित् कालिन्दीतट-विपिन-संगीत करवो
मुदाभीरी-नारी-वदन कमलास्वाद-मधुपः।
रमाशम्भुब्रह्माऽमरपतिगणेशार्चितपदो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥१॥

कभी यमुना के तटीय वन में मधुर गीत गाते हुए, कभी भ्रमर की तरह गोपियों के मुख-कमल का रसास्वादन करते हुए तथा जिनके चरणों को लक्ष्मी, शंकर, ब्रह्मा और गणेश वन्दना करते हें, ऐसे सबके स्वामी महाप्रभु जगन्नाथ मुझे दर्शन दें।

Once you appeared in the woods. On the bank of Kalandi. Dancing to the tune of the sweet concert. Seeking nectar from the lotus faces of cowherd women. Your feet adored by Laxmi, Siva, Indra and Ganesh. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे
दुकूलं नेत्रान्ते सहचर कटाक्षं-विदधते।
सदा श्रीमद् वृन्दावन वसति लीला-परिचयो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥२॥

जो अपने दाएँ हाथ में बाँसुरी धारण करते हैं, जिनके सिर पर मोर के पंखवाला मुकुट हो, जो पीला वस्त्र धारण करते हों, जो अपने मित्रों पर कटाक्ष करते हों, जो हमेशा वृन्दावन में रहकर अनेक प्रकार की लीलाएँ करते हों, हे ऐसे सबके स्वामी महाप्रभु जगन्नाथ, मुझे दर्शन दें।

Holding flute in your hand. Head bedecked with peacock tall. And the yellow silk in the waist. Glancing at your companions. All the time you bask in the glory. And perform leelas in the Vrindavan. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे
वसन् प्रासादन्तः सहज बलभद्रेण वलिना।
सुभद्रा मध्यस्थः सकल सुरसेवाऽवसरदो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥३॥

हे महान् नील समुद्रवर्णा तेजस्वी, नीलशैल पर अपने बड़े भाई बलभद्र तथा बहन सुभद्रा के साथ निवास करने वाले, सभी देवों को अपनी सेवा का अवसर देने वाले, हे सबके स्वामी महाप्रभु जगन्नाथ, मुझे दर्शन दें।

Close by the ocean on the shining blue mountain. Sharing he sanctum santorum with the mighty Balabhadra. And Subhadra seated at the centre, you offer chances to the deities. For paving obeisance. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

कृपापारावारः सजलजलदश्रेणि रुचिरो
रमावाणीरामः स्फुरदमलपद्मे क्षणमुखैः।
सुरेन्द्रैराराध्यः श्रुतिगणशिखा गीत चरितो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥४॥

हे कृपासिन्धु! घने मेघ स्वरूप वाले, लक्ष्मी और सरस्वती के साथ आनन्दमय जीवन व्यतीत करने वाले, तेज, स्वच्छ नयन-कमल वाले, देवताओं द्वारा पूजित होने वाले, श्रुतियों में वर्णित अच्छे चरित्र वाले, हे महाप्रभु संसार के स्वामी! मुझे दर्शन दें।

Oh ocean of compassion. Whose form resembles a range of thick clouds. Who treks his way with Laxmi and Saraswati. Whom Lord of the deities adore with vedic chanting, waving of flames and reading His leelas in rhyme. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

रथारूढ़ो गच्छन् पथिमिलित-भूदेवपटलैः
स्तुतिः प्रादुर्भावं प्रतिपदं मुपाकर्ण्य सदयः।
दयासिन्धुर्बन्धुः सकलजगतां सिन्धुसुताया
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥५॥

रथ पर विराजमान होते समय जिनकी ब्राह्मणों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है, जो भक्तों की प्रार्थना सुनते हैं, जो दयालु हैं, लोकबन्धु हैं, दयासागर हैं, वही हे महाप्रभु जगन्नाथ! संसार के स्वामी, मुझे दर्शन दें।

Ascending the chariot when you proceed. Monarchs throng on your pathway. Hearing the burden of their hymns with compassion. Ocean of grace, the friend of universe, being merciful (to the ocean). You have chosen your adobe ashore. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

परंब्रह्मापीढ्यः कुवलयदलोत्फुल्ल नयनो
निवासी नीलाद्रौ निहित चरणोऽनन्तशिरसि।
रसानन्दो राधा सरसवपुरालिंगनसुखो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥६॥

हे परमब्रह्म सुखकारी, कमल दल नयन वाले, आनन्दसागर, आनन्दपथ चेतना के स्वामी, भगवती राधा के साथ आनन्दमय जीवन व्यतीत करने वाले, हे महाप्रभु, संसार के स्वामी मुझे दर्शन दें।

Holding fast to your all-pervading self. You who have lotus-petalled eyes, blissful. Reside in Niladri with your feet resting on Ananta naga. Basking in blissful love you are in ecstasy. While embracing the elegant shape of Radhika. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

न वै प्रार्थ्यं राज्यं न च कनकमाणिक्य विभवं
न याचेऽहं रम्यां निखिलजनकाम्यां वरवधूम्।
सदाकाले काले प्रमथपतिना गीत चरितो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥७॥

मैं राज-पाट नहीं माँगता, न ही सोने-चांदी की चमक-दमक, मुझे दूसरों की तरह कंचन-कामिनी भी नहीं चाहिए, सभी युगों में शिव-शंकर जिसकी लीलाओं का गुणगान करते हैं, हे महाप्रभु! संसार के स्वामी मुझे दर्शन दें।

Neither I crave for kingdom nor for gold, fuby and wealth. I do not pray for the most beautiful woman coveted by all. Your leelas is sung in every age by Shiva Shankar. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

हर त्वं संसारं द्रुततरमसारं सुरपते
हर त्वं पापानां विततिमपरां यादवपते।
अहो दीनानाथो निहितमचलं निश्चितपदं
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥८॥

हे देवों के देव! आप हमारे सांसारिक कष्टों को यथाशीघ्र दूर करें। हे यदुनन्दन! हमें पाप-मुक्त करो। हे दीनबन्धु, हे अनाथों के नाथ, हे सबके स्वामी! महाप्रभु जगन्नाथ, मुझे दर्शन दें।

Lord of the deities, save me from the clutches of this ephemeral world. Oh Lord of Yadus, free me from the unearable burden of sins. You are the Lord of the sufferers. You grant graciously the touch of your lotus feet. Oh Lord! the Master of the Universe, appear in my vision.

प्रतिदिन प्रात:काल देवविग्रहों को मंगल आरती के निवेदन के बाद वैदिक स्नानविधि से सम्पन्न किया जाता है। नियमानुसार यह नीति सुबह 6 बजे से 6:30 के बीच सम्पन्न होती है। देवविग्रहों की स्नानविधि और दंतमार्जन विधि को 'अवकाश' कहा जाता है।

पिछली रात को बड़सिंहार वेष के दौरान पहने हुए खण्डुआवस्त्र, पुष्पों तथा आभूषणों को सुबह उतार दिया जाता है। पुष्पालक सेवक तीनों देवविग्रहों को तीन तड़प वस्त्र पहनाते हैं। उत्तरीय वस्त्र केवल बलभद्र और जगन्नाथ को पहनाया जाता है, जबकि सुदर्शन को केवल एक तड़प वस्त्र से आभूषित किया जाता है। एक निर्दिष्ट नाप के आधार पर ये वस्त्र नियुक्त निपुण तन्तुवायों के द्वारा बनाए जाते हैं।

प्राचीन आख्यान के अनुसार देवविग्रहों को इस तरह वेषों में सजाने की सुदीर्घ परम्परा नवीं सदी में शंकराचार्य ने किया था। राजा ययाति के शासनकाल में इसका प्रचलन हुआ।

अवकाश वेष के बाद ही दंतमार्जन और स्नान नीतियाँ सम्पन्न होती हैं। एक खास सेवायत, जो 'मुखपखाल' कहलाता है, उसके आमंत्रण पर तीनों पुष्पालक सेवायत रत्नसिंहासन के नीचे रखे हुए सुवासित जल से पंचोपचार सेवा करते हैं। यहाँ उल्लेखनीय यह है कि एक खास सेवक भीतराछ महापात्र के द्वारा महाप्रभु जगन्नाथ की ओर दूसरे दोनों पुष्पालकों से महाप्रभु बलभद्र तथा देवी सुभद्रा की

स्नानविधि अनुष्ठित होती है। तीन रजत-पात्रों में सुरक्षित सुवासित पुष्पजल से देवविग्रहों के मुख प्रक्षालन, दंतमार्जन और स्वर्ण जीभ-छेली से जीभ की सफाई आदि क्रियाएँ परम्परा के अनुसार सम्पन्न की जाती हैं। अष्टधातुओं से निर्मित तथा सुवासित पुष्पजल से प्रक्षालित एक दर्पण को मुखदर्शनार्थ देवविग्रहों के सामने दिखाया जाता है और इसी से अवकाश वेष सम्पन्न होता है।

अवकाश के बाद विग्रहों का मइलम वेष होता है और तभी महाप्रभु के भक्तगण को रत्नसिंहासन तक जाकर दर्शन करने की अनुमति दी जाती है।

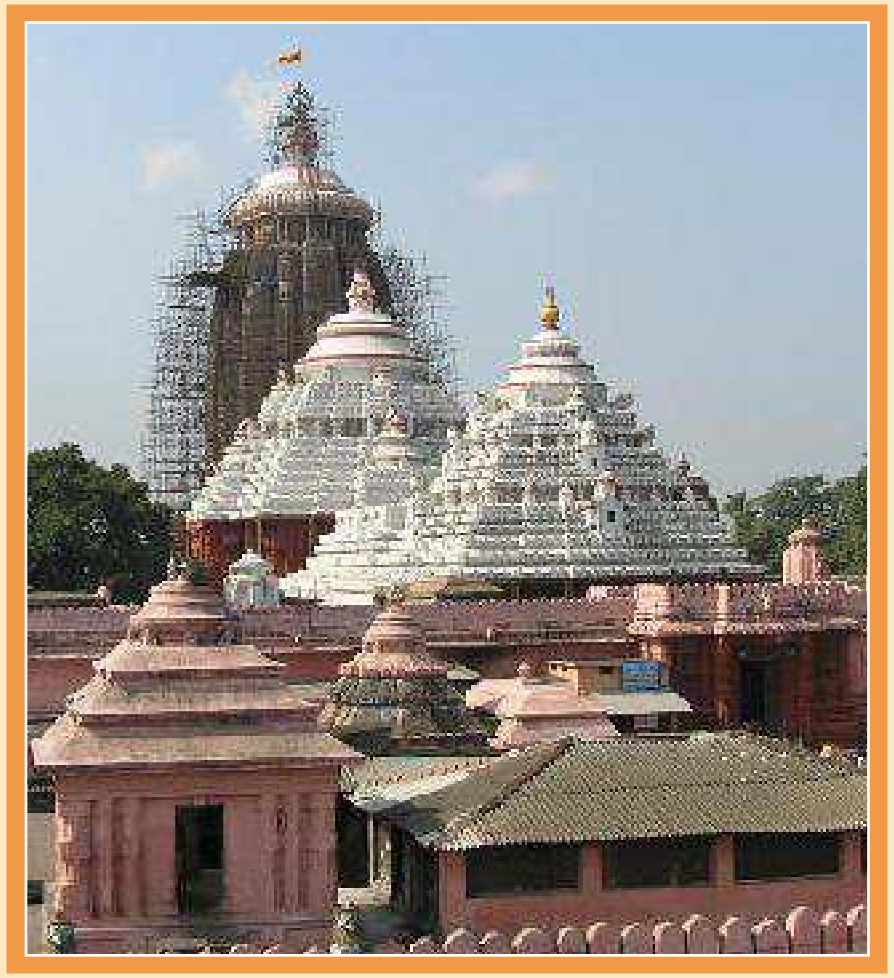

बड़सिंहार वेष

इस वेष में देवविग्रहों की खास पुष्पसज्जा शामिल है। विग्रहों की इस तरह की विभिन्न प्रकार के पुष्पों की सज्जा भारत में अद्वितीय है। मंदिर में इस तरह पुष्पसज्जा का प्रचलन बारहवीं सदी से आरम्भ होने की जानकारी उपलब्ध है।

हर रात को 'चन्दनलागि' या चन्दन लगाने की विधि के बाद यह पुष्पों की सज्जा की जाती है। मंदिर के रिकॉर्ड के अनुसार रात साढ़े दस बजे यह विधि सम्पन्न होती है। पुष्पनिर्मित 'करपल्लव, कुण्डल और तगड़ी' आदि विभिन्न आभूषण श्रीराम दास मठ से उपलब्ध कराने का नियम है। एमार मठ की तरफ से फूल चन्द्रिका भेंट की जाती है। इन दोनों मठों को इसके लिए नि:शुल्क जमीन प्रदान की गई है। चांगड़ मेकाप की तरफ से पहनाने के लिए पटवस्त्र प्रदान करने की परम्परा प्रचलित है। जयदेव महाप्रभु के अनन्य भक्त के द्वारा लिखित 'गीतगोविन्दम्' के संस्कृत श्लोक इन पटवस्त्रों पर बुनाई से लिखे गए हैं।

कहा जाता है कि उस समय जयदेव का गीतगोविन्दम् बहुत लोकप्रिय था। बड़सिंहार वेष के दौरान गीतगोविन्दम् के श्लोकों से बने हुए खण्डुआ, पहरन, फूटा, श्रीकपड़ा और सुतालुगा आदि पटवस्त्रों से देवविग्रहों को मण्डित किया जाता है। यहाँ उल्लेखनीय यह है कि महाप्रभु बलभद्र के द्वारा परिहित वस्त्र नीली धारीवाले और प्रभु जगन्नाथ के द्वारा परिहित वस्त्र पीली धारीवाले होते हैं। देवी सुभद्रा को लालधारी वाले सफेद वस्त्र पहनाए जाते हैं। पुष्प आभूषणों में गभा, चन्द्रिका, अलका, तिलक, झुम्पा, नकुआशी, दयणा, अधरामल, मकर कुण्डल,

श्रीपयरामल, हृदयपदक, कौस्तूभपदक और करपल्लव आदि अत्यन्त प्रसिद्ध हैं।

बड़सिंहार वेष भक्तों के मन में एक विशेष स्पन्दन उत्पन्न करता है। कहते हैं कि ओड़िआ भागवतकार अतिबड़ी जगन्नाथ दास प्रतिदिन रात को इस बड़सिंहार वेष के दर्शन के बाद ही शयन करते थे। बड़सिंहार वेष के बाद भोग (प्रसाद) समर्पित किया जाता है और देवविग्रहों को शयन करने का या रात्रि विश्राम करने का मौका दिया जाता है।

साल भर धारण किए हुए वेषों में सबसे अधिक आकर्षक वेष सोनावेष ही होता है। यह वेष वर्ष में पाँच बार होता है। दशहरा, पौष पूर्णिमा, दोलपूर्णिमा, कार्तिक पूर्णिमा और आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि पर यह वेष अवश्य दर्शनीय होते हैं। आषाढ़ शुक्ल एकादशी के दिन देवविग्रहों को सिंहद्वार के सामने ही सोना वेष से आभूषित किया जाता है, जबकि दूसरों अवसरों पर रत्नसिंहासन पर ही सोनावेष सम्पन्न किया जाता है। प्रचलित परम्परा के अनुसार गंगवंशीय तृतीय राजा अनंगभीमदेव ने तेरहवीं सदी में प्रभु जगन्नाथ को राज्य के तथा राष्ट्र के देवता के रूप में घोषित किया था। राजा कपिलेन्द्र देव ने अपने आप को प्रभु के रावत, पुत्र और कुशल सैनिक के रूप में घोषित किया और उपहार के रूप में काफी सोना, चाँदी, मणि, मोती, हीरा, नील आदि मूल्यवान रत्नालंकार अर्पण किए थे। उन्हीं के शासनकाल से यह सोना वेष चलता आ रहा है। इस तरह उत्कल सम्राट और जाति के अधीश्वर तथा ऐश्वर्य के अधिकारी के रूप में महाप्रभु जी का सोना वेष युगों से होता रहा है।

उड़ीसा के चार क्षेत्र (वैष्णव धर्मानुसार)

शंख क्षेत्र	-	**पुरी,**	**चक्र क्षेत्र**	-	**भुवनेश्वर**
गदा क्षेत्र	-	**जाजपुर,**	**पद्म क्षेत्र**	-	**कोणाक**

कहा जाता है कि ओड़िशा से बहुत दूर में मनोहर दास नाम का एक साधु रहता था। एक बार वे भगवान जगन्नाथ के दर्शन करने पुरी पधारे। उनकी यह यात्रा श्रमसाध्य थी। अनेक जंगल, पहाड़, नदी-नाले पार करते हुए उनका शरीर थक गया, पर वे किसी की परवाह न करते हुए चलते रहे। बीच में मठ, आश्रम, मंदिर आदि में वे रूककर चलते थे। एक दिन चलते-चलते उन्हें बड़ी प्यास लगी। चलते-चलते अचानक देखा कि एक पोखर है और पास में एक सुन्दर गाँव भी है। मनोहर आनन्दित होकर अँजुरी से जी भर पानी पीने लगे। जब उन्होंने सिर उठाया तो देखा कि पोखर में अगणित पद्म खिले हैं और उनकी खुशी की सीमा न रही। उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि जाड़े में पद्म नहीं खिलते। उन्होंने बड़ी भक्ति के साथ प्रभु जगन्नाथ का नाम लिया और मुश्किल से खिले पद्मपुष्पों को संग्रह करके उनको अपने मैले अंगोछे में भरकर तेजी से चलने लगे। जगन्नाथ मंदिर में पहुँचकर उन्होंने एक पण्डा (पूजाहारी सेवक) को अनुरोध किया कि ये पद्मपुष्प कृपया प्रभु के चरणाविन्द में समर्पित किये जाएं। मैले अंगोछे में पद्म को देखकर पण्डे को बड़ा क्रोध आया और ऊबकर उसने उन पुष्पों को फेंक दिया। मनोहर ने बड़ी व्याकुलता से फूलों को इकट्ठा किया और अवसाद भरे मन से मंदिर से बाहर आकर सिंहद्वार के समीपस्थ बड़छत्ता मठ के पास प्रभु को स्मरण करते हुए बेहोश हो गया। रात को प्रभु जगन्नाथ राजा गजपति के सपने में आए और बोले, 'हे राजन्! मेरा परम भक्त तेरे सेवकों द्वारा लाञ्छित होकर सिंहद्वार के

निकट मूर्च्छित पड़ा है। आज रात उसके लाए पद्मों से ही मेरा बड़सिंहार वेष होगा और पद्मचावल की खीर पकाकर उस साधु को सेवन कराओ। उसके प्राणों की रक्षा करो। इस घटना की स्मृति में पौष पूर्णिमा के इस दिन को प्रतिवर्ष देवविग्रहों का पद्मवेश सम्पन्न किया जाता है।

गज उद्धार वेष

परम्परानुसार प्रतिवर्ष माघ पूर्णिमा के दिन श्रीविग्रहों का गज उद्धरण वेष किया जाता है। पुराणों में यह कथा प्रसिद्ध है कि वरुण ह्रद में जब गजराज स्नान कर रहे थे, विराट कुंभीर ने उन्हें आक्रमण किया। कुंभीर से बचने का कोई उपाय न देखकर गजराज ने अपनी रक्षा के लिए भगवान से प्रार्थना की। उसकी पुकार सुनकर अविलम्ब पुरुषोत्तम भगवान भक्त गजराज की रक्षा के लिए गरुड़ पर आसीन होकर तुरंत अपने को प्रकट किया और चक्र से कुंभीर का संहार करके अपने भक्त गजराज का उद्धार किया। इस कथा की स्मृति में तथा प्रभु की दिव्य कृपा की प्रार्थना में युगों से श्रीमंदिर में देवविग्रहों का यह वेष होता है। भौमवंश की रानी बकुल महादेवी ने इस प्रथा का प्रचलन किया था। बीच में इस वेष की प्रथा बंद हो गई थी। फिर सन् 1775 में राजा रामचन्द्र देव ने इस वेष का पुन: प्रणयन किया। भीतरछ, तलिछ, पुष्पालक नियोग, खुण्टिया और मेकाप आदि सेवकों के सहयोग से यह वेष सम्पन्न होता है। इसमें चूल, किरीट, कुंडल, सूर्य-चन्द्र, कमरपटी, छाता, बाजूबन्ध, हाथफेरा, आपुछ, शंख, चक्र, गदा, पद्म, हल-मूसल, बाँकी, पाहुड़, जरी, पाँव के कड़े, हाथ माल, नाकचना और पद्मकली आदि आभूषण शामिल हैं।

सन् 1979 ई. से यह प्रथा नियमित रूप से मंदिर के अधिकारियों की देखरेख में चलती रही है। इस अवसर पर श्री जगन्नाथ जी और बलभद्र चतुर्भुज रूप में प्रकट होते हैं। श्री जगन्नाथ जी शंख, चक्र, गदा, पद्म धारण कर गरुड़ पर आसीन

रहते हैं। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि केवल श्रीजगन्नाथ जी की गोद में लक्ष्मी की प्रतिमा विराजती है। बलभद्र जी शंख, चक्र, हल, मूसल धारण करके वासुदेव के रूप में विराजते हैं। देवी सुभद्रा कृष्ण की तरह पाँव छन्दित करके एक पद्मकली हाथ में लिए दण्डायमान रहती हैं। दो हाथी अपने शुण्डों पर पद्मकली लिए श्रीजी के निकट दण्डायमान रहते हैं। हाथी के शरीर को आक्रमण करने की मुद्रा में कुंभीर की मूर्ति रहती है। श्रीमंदिर में मध्यान्ह धूप के बाद यह वेष सम्पन्न किया जाता है।

रघुनाथ वेष

भगवान श्रीराम के अवतार की स्मृति में प्राचीन काल से श्रीजगन्नाथ जी को प्राचीनकाल से रघुनाथ के वेष में सजाने की परम्परा रही है। इस राजकीय वेष में अत्यधिक सोना, चाँदी, रत्न, मणि, माणिक्य से बने अलंकारों का व्यवहार होता है।

श्रीजगन्नाथ जी, श्रीबलभद्र और श्रीसुभद्रा नाना रत्न अलंकार धारण कर राजकीय वेष में भक्तों को दर्शन देते हैं। कुछ विद्वानों का कहना है कि इस वेष के प्रवर्तक रामानुजाचार्य थे। दूसरे विश्वास करते हैं कि राजा रामचन्द्र देव उनके ग्यारहवें वर्ष के शासन काल में श्रावण मास की शुक्ल नवमी तिथि के दिन अपने आप को राजा इन्द्रद्युम्न (चतुर्थ) घोषित किए थे। इस दिन उन्होंने बहुत कीमती स्वर्णाभूषण बनवाया और श्रीजी के रघुनाथ वेष का प्रणयन किया था। वैशाख मास की ठीक उसी नवमी तिथि को पुन: यह रघुनाथ वेष सम्पन्न किया जाता है, जिस दिन राजा रामचन्द्र देव ने सिंहासन आरोहण किया था। श्रीमंदिर के रिकॉर्ड रूम, मशहूर पत्रिका 'उत्कल दीपिका' तथा प्राचीन पत्र-पत्रिकाओं से पता चलता है कि अब तक नौ अवसरों पर यह वेष सम्पन्न किया जाता है और 1905 ई. के बाद श्रीमंदिर में यह वेष नहीं हुआ।

इस वेष के सम्बन्ध में एक किंवदंती प्रचलित है कि महाराज दशरथ को तीन-तीन पटरानियों (कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा) के अलावा और 72 रानियाँ थीं। उनमें एक को दशरथ के औरस से एक कन्या हुई। रानियों में ईर्ष्या पैदा न हो जाए, इस दृष्टि से पहले दिए हुए वचन के अनुसार अपने मित्र महर्षि

याज्ञवल्क्य को उन्होंने यह कन्या दे दी। भगवान राम के जन्म से पहले ही यह घटना घट चुकी थी। उस कन्या का महर्षि ऋष्यशृंग के साथ विवाह कर दिया गया।

इस तरह भगवान राम की एक बड़ी बहन थी। इसलिए अनेक विश्वास करते हैं कि इस वेष के दौरान देवी सुभद्रा योगमाया के रूप में प्रकट होती हैं।

अलरनाथ मंदिर

चन्दनलागि वेष

प्रतिदिन संध्या धूप के बाद भगवान का पहला वेष अलग कर चन्दन लगाया जाता है, अतः देवविग्रहों की दैनिक नीति में चन्दनलागि वेष का विधान है। श्रीमंदिर प्रशासन की तरफ से उपलब्ध कराए चन्दन और कपूर लेकर घटवारी सेवक शिला पर घिसता है, उसे मुदली सेवक तीन चाँदी के पिंगण में रखता है। मइलम के बाद पालिआ मेकाप हाथ धोकर तीनों पिंगण तक 'हटो-हटो' कहता चलता है और सिंहासन तक जाता है। गरासेवक पानी लेकर पुष्पालक सेवक को देता है। पुष्पालक ठाकुरों को चन्दन प्रलेप करते हैं और दूसरे आभूषण पहनाता है। हड़प नायक फिर बिन चूने का पान प्रभु को अर्पण करते हैं।

प्रतिदिन चन्दन अर्पण के अलावा चन्दन यात्रा के दिनों में विशेष चन्दन अर्पण किया जाता है जो अक्षय तृतीया से 42 दिनों तक चलता है। पहले 21 दिन भीतर चन्दन होता है, बाद के 21 दिन बाहर चन्दन कहलाता है।

अक्षय तृतीया के पहले दिन रात में चन्दन चर्चित करने के बाद राघवमठ से आया साढ़े सात सेर चन्दन और श्रीमंदिर प्रशासन से दिया साढ़े सात सेर चन्दन रखकर पालिआ मेकाप उसे भोगमण्डल में ले आते हैं। अक्षय तृतीया के दिन देवविग्रहों को चन्दन चर्चित किया जाता है और उसके बाद महास्नान किया जाता है। अब पिछले दिन अधिवास किया चन्दन पिंगणी को भोगमण्डप से लेकर छः सेवक घंटा, छत्र, तूरी सहित श्रीमंदिर की तीन परिक्रमा करते हैं। फिर वह चन्दन रत्नसिंहासन के पास तीन बाड़ तक स्थापित करते हैं। इस के बाद वहाँ पानी

छींटकर शीतल भोग होता है। भोग समर्पण के बाद विग्रहों को चन्दनचर्चित किया जाता है। जय और विजय नाम के दोनों द्वारों को बन्द कर दिया जाता है और देवविग्रहों को राजकीय पंखों या चामरों से हवा दी जाती है।

सेवायत

श्री जगन्नाथ जी की सेवा, पूजा और अर्चना के लिए सैंकड़ो वर्षों से 'सेवायत' अथवा सेवक रखने की परम्परा है। ये सेवक लगभग 36 प्रकार के हैं। श्रीमन्दिर के सत्व लिपि ग्रन्थ में 119 प्रकार के सेवकों का वर्णन है। वास्तव में, श्री जगन्नाथ जी के सेवकों की संख्या बहुत ज्यादा है। ये सेवक श्री जगन्नाथ जी की सेवा-पूजा करते हैं। पीढ़ी-दर-पीढ़ी से इसे ये अपना परम कर्त्तव्य मानकर यथाविधि अपने कर्त्तव्य का पालन करते आ रहे हैं। ये सेवक श्री मन्दिर के साथ-साथ इस मन्दिर के अंतर्गत अन्य मन्दिरों में स्थित देव-देवियों की पूजा-अर्चना आदि भी करते हैं।

प्रत्येक सेवक के लिए अलग-अलग सेवा-कार्य होता है। नियमानुसार प्रत्येक सेवक को सिर्फ अपना सेवाकार्य करना पड़ता है। सेवकों को उनके सेवाकार्य के लिए वेतन देने का विधान नहीं है। श्री जगन्नाथ जी और अन्य देवियों की पूजा, अर्चना, भोग, प्रसाद आदि से प्राप्त आय को सेवक आनन्दपूर्वक ग्रहण करते हैं। दो प्रकार की सेवाएँ हैं- मुख्यत: राज सेवा और अन्यान्य सेवाएँ। सेवकों की संख्या लगभग 6,000 है।

पुरी के गजपति महाराज जी श्रीमन्दिर के प्रथम और प्रधान सेवक हैं। रथयात्रा के समय वे तीनों रथों को सोने के झाड़ू से साफ करते हैं। नव कलेवर के समय महाराज के हाथों से सुपारी ग्रहणकर दइता और ब्राह्मण दारू (काष्ठ) की खोज में निकलते हैं। श्रीमन्दिर के प्रमुख सेवकगण- राजगुरू, पाटयोषी, महापात्र, तलिछ महापात्र, भंडार मेकाप, पालिआ मेकाप, पुरोहित, मुदिरथ, पुष्पालक, बड़ पण्डा, महाजन, प्रतिहारी, खुंटिया, पति महापात्र, गरावडु, विमानवडु, दइता, गोछिकार, सुना गोस्वामी, महासुआर, पाइक, रोष पाइक, पुराण पंडा, चित्रकार, रूपकार, घंटुआ आदि हैं।

गजानन वेष

श्रीमंदिर की द्वादश यात्राओं में स्नानयात्रा अन्यतम है। इसे देवस्नान यात्रा कहा जाता है। यह यात्रा ज्येष्ठ मास की पूर्णिमा की तिथि में सम्पन्न की जाती है। चतुर्धा देवविग्रह आनन्द बाजार में स्थित स्नान मण्डप पर विराजमान होकर वहाँ गजानन वेष में अलंकृत होते हैं। परम्परा के अनुसार स्नान मण्डप पर विग्रहों की स्नान नीति होने के बाद गोपालतीर्थ मठ और राघवदास मठ से आये हाथी वेष के उपकरणों से तीनों विग्रहों को सज्जित किया जाता है। स्वत्वलिपि के अनुसार लेंका घंटा तुरही सहित गोपाल तीर्थ मठ से बलभद्र के हाथी वेष के उपकरण लाकर जगमोहन के गरुड़ के पास रखते हैं। बाद में राघवदास मठ से अन्य दो देवविग्रहों के लिए सामग्री लाई जाती है। तब गजपति महाराज या उनकी अनुपस्थिति में मुदिरस्त सेवक तीनों बाड़ पर राजसेवा करते हैं। उसे स्नानमण्डप में 'छेरा पहँरा' कहा जाता है। सुआरबडु पानी छींटते हैं, अब सारे उपकरण लाकर स्नान मण्डप में अवस्थापित करते हैं। मंदिर के सेवक अब मिलकर तीनों बाड़ों पर हाथी वेष करते हैं।

कहा जाता है कि पंद्रहवीं सदी में महाराष्ट्र के गाणपत्य गणपतिभट्ट पुरी में पधारे थे। वे गणेश के बड़े भक्त थे। स्नानपूर्णिमा के दिन स्नानमण्डप पर चतुर्धा मूर्ति दर्शन करने के बाद भी उन्हें संतोष नहीं हुआ। वे निराश लौट रहे थे। मुकेश्वर के पास आकाशवाणी सुनी तो वे लौटे। देखा तो ठाकुर जी गणेश वेष में

है। बलभद्र श्वेत और जगन्नाथ श्याम गणपति वेष में विराज रहे हैं। गणपति भट्ट विभोर हो उठे। तत्क्षणात् वे चरणारविन्दों में प्रणिपात करने लगे। इसी के स्मारक स्वरूप यह वेष होता आया है। प्रतिवर्ष प्रभु गजानन वेष धारण करते हैं। सर्वधर्म सम्प्रदाय के लोग बड़दाण्ड में यह रूप दर्शन करके मुग्ध हो जाते हैं।

घोड़ालागि वेष

साधारणत: जाड़ों में लोग शीतवस्त्र पहनते हैं। वैसे ही महाप्रभु को भी शीतवस्त्रों से मण्डित किया जाता है। इस वेष को 'घोड़ालागी वेष' कहते हैं। तीनों देवविग्रहों के घोड़ा (ढ़ोपने) लागी हेतु वस्त्र निर्मित होते हैं। ओढ़नषष्ठी (प्रावरण षष्ठी) से माघ मास शुक्ल पंचमी तक प्रतिदिन अवकाश के बाद और मध्यान्ह धूप के बाद ठाकुर यह घोड़ वेष धारण करते हैं। इसमें सूत के वस्त्र, खण्डुआ पाट, वेलवेट का घोड़वस्त्र, पुंटा, मफलर, टोपा आदि व्यवहृत होते हैं। इस वेष में महाप्रभु चूल लगाते हैं। परम्परा के अनुसार विभिन्न वार में श्रीजी विभिन्न रंगों के शीतवस्त्र धारण करते हैं। जैसे कि रविवार को लाल रंग, सोमवार को काले छींट मिला शुक्ल रंग, मंगलवार को बारह पटिआ (पंचरंग मिला) शीत वस्त्र, बुधवार को नीलरंग वाला शीत वस्त्र, गुरुवार को बासंती रंग वाला शीत वस्त्र, शुक्रवार को शुक्ल रंग वाला शीत वस्त्र और शनिवार को काले रंग वाला शीत वस्त्र। ज्योतिषियों का कहना है कि सप्ताह के सात दिन सात ग्रहों का प्रतीक है।

घोड़ालागि वेष के समय पूजापण्डा सिंहासन के नीचे बैठकर पूजा करते हैं। दोपहर में शीत कम होता है। तब प्राय: ठाकुर जी शीतवस्त्र धारण नहीं करते। शीतवस्त्रों को पहनते समय श्रीजी आठ प्रकार के स्वर्णालंकारों से आभूषित होते हैं। तीनों ठाकुरों के लिए चौदह हाथ लंबे और तीन हाथ चौड़े पाटवस्त्रों की जरूरत होती है।

दरिद्रता प्रकट करना दरिद्र होने से अधिक दु:खदायी है।

शीत का प्रकोप कम होने पर लोग कंबल, स्वेटर की जगह पतली चादर, गरम कपड़े का कमीज पहनते हैं। वैसे ही ठाकुर जी वसंत पंचमी से फगु दशमी तक वैसी ही कमीज पहनते हैं, जो पूरे अंग को नहीं ढकती। इसे जामालागि वेष कहते हैं। इस वेष के समय प्रभुजी 30 प्रकार के स्वर्ण अलंकार धारण करते हैं। घोड़ालागि वेष के लिए श्रीमंदिर के पारम्परिक दरजी सेवक वेलवेट कपड़े से इन घोड़ वस्त्रों की विशेष तौर से सिलाई करते हैं।

गुण्डिचा मंदिर

आँखों में मनुष्य की आत्मा का प्रतिबिम्ब होता है।

नवांक वेष

श्रीमंदिर में देवविग्रहों का नवांक वेष मकर संक्रांति के पहले दिन सम्पन्न किया जाता है। इस दिन श्रीजगन्नाथ तथा बलभद्र क्रमशः शंख चक्र तथा हल मूसल धारण करते हैं। इसे नवांक वेष कहते हैं।

पहले ये उपकरण श्रीरामदास मठ से उपलब्ध किया जाता था। कुछ वर्षों से उस मठ की तरफ से यह परम्परा बंद कर दी गई और श्रीमंदिर के प्रशासन की तरफ से इस वेष की व्यवस्था की जा रही है।

इस दिन देवविग्रहों को गेंदा पुष्पों की मालाओं से आभूषित किया जाता है, जो मुकुटों से रत्नसिंहासन तक लम्बमान रहते हैं। इन मालाओं में कुछ गुलाब के फूल भी शामिल होते हैं। इस दिन चौदह से पन्द्रह मालाओं की जरूरत पड़ती है, जबकि दूसरे साधारण दिनों में चार या पाँच मालाओं की जरूरत होती है। किरीटों में गेंदा पुष्पों से बनी मालाओं को तुलसी के पत्तों से बनी मालाएँ घिरी रहती हैं। मकर संक्रांति के पहले यह वेष किया जाता है, क्योंकि इस समय गेंदा पुष्प पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इस दिन प्रभु मदनमोहन को सिंहासन पर लाया जाता है और प्रभुजी के एक संस्कार शुद्ध माला लिए और पालकी पर सवार किए प्रभु मदनमोहन को मंदिर की चारों तरफ साढ़े चार बार घुमाया जाता है।

वनभोजी वेष

यह विश्वास किया जाता है कि इस सुन्दर वेष का प्रचलन राजा श्री प्रतापरुद्र देव के उपदेष्टा राय रामानन्द और श्री चैतन्य दास के द्वारा किया गया था। यह वेष भक्तों को भगवान कृष्ण और बलराम के एक वनभोज की याद दिलाता है। अतः इस वेष में जगन्नाथ और बलभद्र को क्रमशः कृष्ण और बलराम के वेष में सजाया जाता है, जो भाद्र मास की पूर्णिमा की तिथि को प्रतिवर्ष सम्पन्न किया जाता है। इस दिन मध्यान्ह धूप के समय दोनों विग्रहों को दो आज्ञामाल समर्पित किये जाते हैं। उसके बाद दोनों मालाओं को मंदिर के दक्षिण द्वार में स्थित कृष्ण और बलराम की मूर्तियों को समर्पित किये जाते हैं। विमानबडू सेवक के द्वारा ये दोनों देवविग्रह पालकी में अवस्थापित किये जाते हैं और घंटा, छाता, तुरही सहित पालकी लेकर मंदिर के बाहर बड़छत्ता मठ के पास काठ के सिंहासन पर देवों को बिठाते हैं। यहाँ कोलीबिका (बेर बेचने वाली) नीति होती है। यहाँ बलराम और कृष्ण के दोनों देवविग्रहों को विभिन्न प्रकार के स्वर्णाभूषणों से आभूषित किया जाता है। दोनों मूर्तियों को मिट्टी से बने दो घड़े दो सीकों से पकड़ाए जाते हैं जिनमें मलाई भरी रहती है। दोनों प्रभु मस्तक पर सोल, बेंत और केवड़े से बने चूल में स्वर्ण कपड़ा खोंसते हैं।

पुराणों के अनुसार गोपपुर में कृष्ण और बलराम अपने बचपन में गाय चराने जंगल जाते थे और वनभोज में बड़ा मनोरंजन करते थे। इस दिन रत्नसिंहासन के पास काठ के बने दो गाय और उनके बछड़े रखे जाते हैं।

यमुना तट पर कालियह्रद में कालिय नाग का कृष्ण ने दलन किया था। इस स्मृति में प्रतिवर्ष भाद्रव मास के कृष्ण पक्ष की एकादशी तिथि को यह वेष सम्पन्न किया जाता है। गवेषकों का कहना है कि सोलहवीं शताब्दी के राजा प्रताप देव के शासन काल से उन्हीं के द्वारा इस वेष का प्रचलन हुआ था।

इस दिन मध्यान्ह धूप के बाद पानी छिड़कने और दक्षिण भोग पूरा होने के बाद मदनमोहन, राम और कृष्ण रत्नसिंहासन पर पधारते हैं। पूजापण्डा तीनों मूर्तियों को आज्ञामाल देने के बाद तीनों मूर्ति पुष्पालकों के हाथों झूलन मण्डप के निकट रखी पालकी में विराजित होते हैं। इसके बाद मंदिर में एक घेरा फिरने के बाद लोकनाथ रोड में स्थित लवणीखिआ मण्डप में पधारते हैं। वहाँ वंदापना, शीतलभोग आदि नीतियों के बाद मार्कण्ड पुष्करिणी में कालियादलन लीला होती है। श्रीमंदिर में एकादशी भोग तथा शीतल भोग आदि नीतियों के बाद श्रीजगन्नाथ के बाड़ में कालियादलन वेष किया जाता है। उसके बाद उन्हें दक्षिण द्वार में अपने स्थान पर रखा जाता है। संध्या धूप के बाद जगन्नाथ बल्लभ मठ से आये बड़े अमृत लड्डू को पालिया खुंटिया से लेकर पुष्पालक श्रीहस्त में अर्पित करते हैं, जो कालियादलन की मूर्ति धारण किये हुए रहते हैं। इस वेष में श्रीजगन्नाथ और श्रीबलभद्र को काष्ठनिर्मित श्रीभुज और श्रीपयर लगाते हैं। वेष से पहले दरजी, चित्रकार और पीठ के सोल कर्मकर्त्ताओं के द्वारा बेत, सूत और कपड़ों से बने और चार अंशों से विभक्त 30 फुट का एक लम्बा साँप सेवकों के द्वारा लाया जाता है।

साँप का सम्पूर्ण शरीर एक काले कपड़े से ढका रहा है और केवल कंचुल के लिए सफेद कपड़ों का इस्तेमाल किया जाता है। सेवक लोग साँप के विभाजित चार अंशों को रत्नसिंहासन पर रखते हैं। साँप का सात फन वाला सिर श्रीजगन्नाथ के चरणों के पास रख दिया जाता है और शेष भाग प्रभु के सम्पूर्ण शरीर को घिरा रहता है। इस अवसर पर देवी सुभद्रा का कोई खास वेष नहीं होता। श्रीबलभद्र की दोनों ओर एक काष्ठनिर्मित गाय और एक बछड़ा रखे जाते हैं।

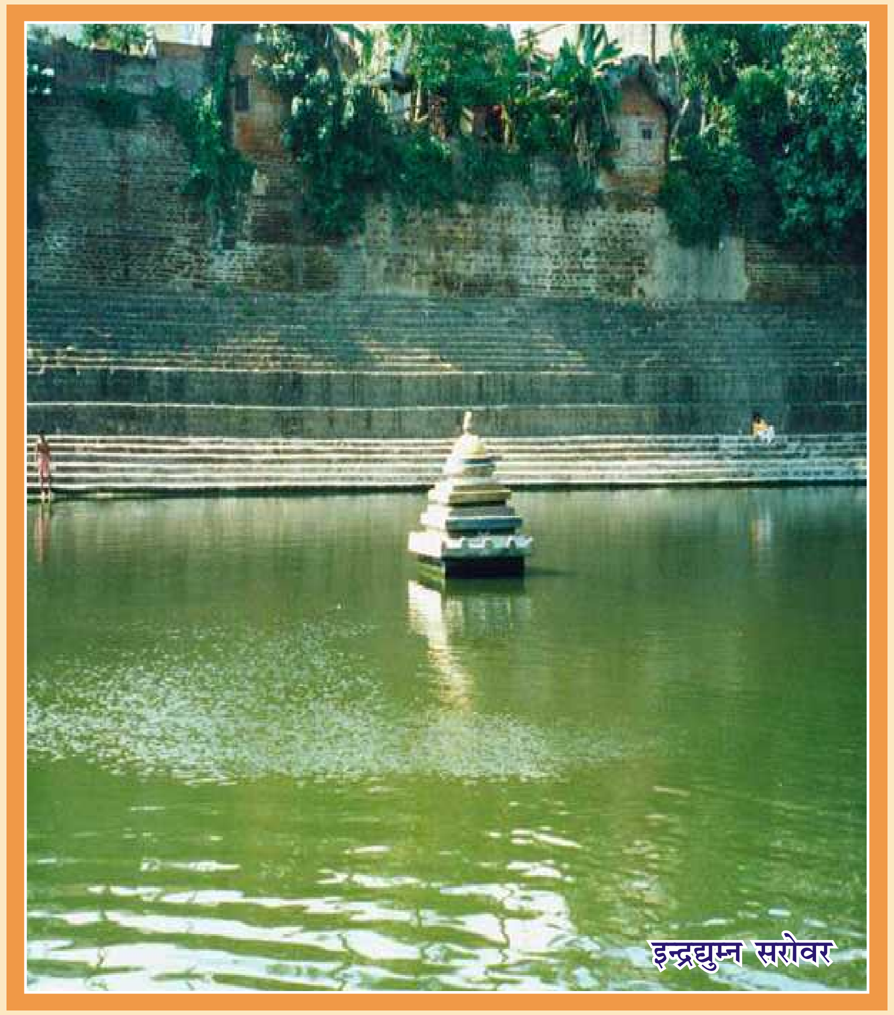

भाद्रव मास के कृष्ण पक्ष की द्वादशी तिथि को श्रीबलभद्रजी यह वेष धारण करते हैं। इस दिन मध्यान्ह धूप के बाद प्रतिवर्ष यह वेष सम्पन्न किया जाता है। श्रीमद्भागवत के दसवें स्कन्द में प्रभु बलराम के द्वारा प्रलम्बासुर के वध की कथा का वर्णन है। एक दिन वृन्दावन में भगवान कृष्ण और बलराम यमुना नदी के किनारे गोपाल बालकों के साथ युद्धाभिनय खेल रहे थे। कंसासुर के द्वारा भेजा हुआ प्रलम्बासुर नाम का एक दैत्य एक गोपाल बालक का रूप धारण करके इस खेल में शामिल हो गया। भगवान कृष्ण को इस घटना का पता चल गया तो उन्होंने बालकों के सामने एक और खेल 'राजा-प्रजा' खेलने का प्रस्ताव रखा। बालकों को दो वर्गों में बाँटा गया। एक वर्ग का नेतृत्व स्वयं भगवान कृष्ण कर रहे थे और दूसरे वर्ग का प्रभु बलराम। प्रत्येक वर्ग के एक खिलाड़ी के साथ दूसरे वर्ग के एक खिलाड़ी का मल्लयुद्ध होना खेल का नियम था। शर्त यह थी कि जो युद्ध में हारेगा, वह विजेता को कंधे पर बिठाकर समीपस्थ वटवृक्ष तक ले जाएगा। इस सिलसिले में प्रभु बलराम के साथ गोपाल बालक बने प्रलम्बासुर की बारी आ गई। इस युद्ध में प्रलम्बासुर जानबूझकर हारा और बलराम को पीठ पर लिए वटवृक्ष की ओर न जाकर उनको मारने के लिए आसमान की ओर उड़ चला। प्रभु बलराम ने उसके मस्तक पर मुष्टि प्रहार किया और उसके सिर के सौ टुकड़े कर डाले। उसी घटना की स्मारकी स्वरूप यह वेष किया जाता है।

इस अवसर पर प्रभु जगन्नाथ और देवी सुभद्रा के कोई खास वेष नहीं होते।

एक विशाल काष्ठनिर्मित प्रलम्बासुर की मूर्ति प्रभु बलभद्र के देवविग्रह के पाँव के नीचे रखी जाती है। प्रभु बलभद्र उसके कंधे पर बैठे हुए जैसे लगते हैं। सांध्य धूप तक यह वेष श्रीमंदिर में देखने लायक बन जाता है।

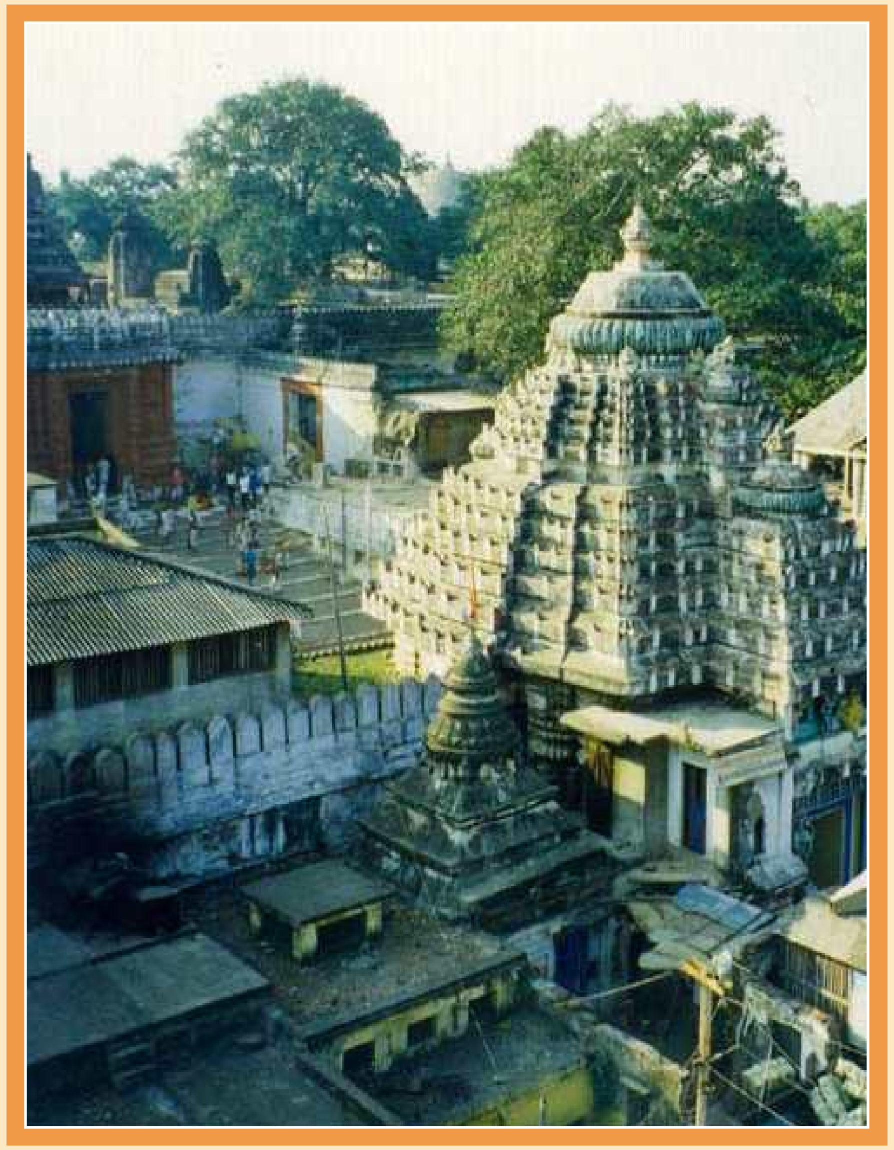

कृष्ण-बलराम वेष

भाद्रव मास के कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी तिथि को यह वेष सम्पन्न किया जाता है। इस अवसर पर प्रभु जगन्नाथ को कृष्ण के रूप में, प्रभु बलभद्र को बलराम के रूप में और देवी सुभद्रा को पद्मासन पर बैठी हुई चार हाथों में विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र धारण करती हुई चतुर्भुजा के रूप में सजाया जाता है। जगन्नाथ और बलभद्र छन्दाचरण (छंदित पैरों की भंगिमा) के रूप में सजाया जाता है। जगन्नाथ के एक हाथ में स्वर्ण वंशी और दूसरे हाथ में एक पद्म पुष्प सुशोभित होता है। बलभद्र के दाहिने हाथ में सींगा और बाएँ हाथ में पद्म धारण किया जाता है। सोल से बना सप्त फेन वाला साँप उनके किरीट पर विराजते हैं। रेशमी वस्त्रों से आच्छादित काष्ठनिर्मित सिंहासन पर देवविग्रहों को अवस्थापित किया जाता है। बाँकचूल और किरीट केवड़े से आभूषित किया जाता है। श्रीपयर, बाँकी, पाउँजी, पहुड़, गोड़मुदी, मल्लीकढ़, चन्द्र, चिता, नाकचणा आदि सभी प्रकार के आभूषण देवविग्रहों के सौन्दर्य को दुगुना कर देते हैं। रत्नसिंहासन पर जगन्नाथ और बलभद्र की दोनों ओर नन्द, उपनन्द, वसुदेव, गोपाल बालक, गोपियाँ, ब्रह्मा, सहस्राक्ष इन्द्र, नारद, रोहिणी और यशोदा आदि को अवस्थापित किया जाता है। उनके सामने चार गायें रखी जाती हैं। मध्याह्न धूप के बाद यह वेष सम्पन्न किया जाता है और संध्या धूप तक भक्त इस वेष का आनन्द लेते हैं। इस वेष के दौरान खीरी और अमलु का भोग लगाया जाता है।

श्रीमंदिर के स्वत्वलिपि के अनुसार बारहवीं सदी के मध्य भाग में खण्डसाही

के जमींदार के द्वारा इस वेष की परम्परा का प्रचलन हुआ था। श्रीमंदिर के परिसर में ही कुशल कारीगर इस वेष की आवश्यक सामग्रियों का निर्माण करते हैं।

पहले यह वेष इसी दिन को गिरि गोवर्धन वेष सम्पन्न किया जा रहा था। पर 1947 से ही यह कृष्ण बलराम वेष में परिवर्तित किया गया।

राधा-दामोदर वेष

श्रीमंदिर में प्रतिवर्ष आश्विन मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि से कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि तक यह वेष सम्पन्न किया जाता है। पुराण के अनुसार मथुरा जाते समय अक्रुर ने यमुना नदी में स्नान करते समय यह वेष देखा था। बारहवीं सदी में श्रीमंदिर में इस वेष का प्रचलन हुआ। कुछ लोगों का कहना है कि सोलहवीं सदी में श्रीचैतन्य देव की पुरी यात्रा के दौरान इस वेष का प्रचलन हुआ था क्योंकि उन्होंने श्री प्रभु जगन्नाथ को राधा और कृष्ण के सम्मिलित रूप में देखा था। राधा-दामोदर वेष इस दिव्य ऐक्य का संकेत है। गवेषकों का कहना है कि राजा प्रतापरुद्र देव के शासनकाल में ही भगवान कृष्ण से सम्बन्धित वेषों या पर्वों का प्रचलन हुआ था।

श्रीमंदिर की स्वत्वलिपि के अनुसार प्रभु बलभद्र इस महीने के प्रत्येक सोमवार को हरिहर वेष धारण करते हैं। इस वेष में उनकी परिच्छद आंशिक श्वेत और आंशिक श्याम रहते हैं।

राधा-दामोदर वेष के दौरान विग्रहों को त्रिकाछ पहनाया जाता है। हाथ में सोने का नलीभुज, बाँस की खपच्ची और कपड़े से निर्मित चूल त्रिमुण्डी पर रहता है। चूल के अग्रभाग में चन्द्रिका होती है। कानों में कुण्डल, ओड़ियानी, चन्द्र और सूर्य आदि कई आभूषण विग्रहों के सौन्दर्य को और भी बढ़ा देते हैं।

लक्ष्मी-नारायण वेष

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की एकादशी तिथि को प्रतिवर्ष यह वेष सम्पन्न किया जाता है। यद्यपि प्रभु जगन्नाथ विभिन्न धर्म और सम्प्रदाय के भक्तों से पूजे जाते हैं, तथापि भगवान विष्णु के रूप में उनके प्रति सर्वाधिक भक्ति प्रदर्शित की जाती है। किंवदन्ती के अनुसार, रामानुजाचार्य को प्रभु ने इसी रूप में दर्शन दिया था और उन्होंने इसी वेष में प्रभु से अवर्णनीय आशीर्वाद प्राप्त किया था। इस आधार पर बारहवीं सदी में इस वेष का प्रचलन माना जाता है।

इस दिन अवकाश नीति के बाद कार्तिक शुक्ल एकादशी को लक्ष्मी नारायण वेष होता है। इस वेष में गोपालबल्लभ, सकालधूप, बालधूप, भोगमण्डप आदि नीति होती है।

इस अवसर पर पुष्पालक सेवक विग्रहों को स्वर्णाभूषणों, मालाओं तथा रेशमी वस्त्रों से सजाते हैं। इस वेष में प्रभु जगन्नाथ और बलभद्र श्रीभुज, शंख, चक्र, हल और मूसल आदि धारण करते हैं। देवी सुभद्रा का इस समय कोई खास वेष नहीं होता। देवविग्रहों के मस्तकों पर स्वर्ण किरीट शोभा पाता है।

यह वेष प्रात: स्नान नीति के बाद सम्पन्न होता है और बालधूप नीति के बाद अंत होता है। इस वेष को 'ठिआकिआ' वेष भी कहा जाता है।

बाँकाचूड़ा वेष

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की द्वादशी तिथि को प्रभुजी इस वेष में प्रकट होते हैं। अवकाश नीति के बाद यह वेष सम्पन्न किया जाता है। पुराणों के अनुसार भगवान कृष्ण को गोपपुर से मथुरा लाते समय अक्रूर ने इस रूप का दर्शन किया था। यह वेष अक्रूर की दृढ़ भक्ति की अनुभूति को भक्तों में स्वानुभव की प्रेरणा देता है। इस अवसर पर देवविग्रहों के किरीटियों पर एक जूड़ा बाँध दिया जाता है। एक सोने का केवड़ा इस जूड़े में खोंस दिया जाता है। यह स्वर्ण किरीट देखने लायक बन जाता है। इस अवसर पर प्रभु को समस्त स्वर्णाभूषण पहनाए जाते हैं। प्रभु जगन्नाथ और बलभद्र के हाथ और पाँव भी सोने से बने रहते हैं। जगन्नाथ शंख और चक्र तथा बलभद्र हल और मूसल धारण करते हैं। देवी सुभद्रा का इस वेष में कोई खास रूप नहीं होता, पर सोने का केवड़ा सिर पर अवश्य आभूषित होता है।

यह वेष स्नान नीति के बाद ही सम्पन्न किया जाता है और बालधूप नीति के समाप्ति तक बना रहता है। प्रभुजी को इस वेष में सजाने के लिए सेवकों को दो-तीन घंटे अवश्य लग जाते हैं।

त्रिविक्रम वेष

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी तिथि को यह वेष प्रतिवर्ष सम्पन्न किया जाता है। इस दिन प्रात: अवकाश नीति होने के बाद पुष्पालक सेवक इस वेष को प्रारम्भ करते हैं।

इस अवसर पर प्रभु जगन्नाथ और बलभद्र मस्तक पर सोल, बेंत, जम्बूरा, कैंथ के गूदे से बने चूल लगाते हैं। किरीटों पर स्वर्ण केवड़ा खोंस दिया जाता है। मस्तकों पर स्वर्ण चूल लगाया जाता है। तीनों देवविग्रहों के मस्तक पर स्वर्ण आभूषण और जगन्नाथ तथा बलभद्र के हस्तों में शंख-चक्र तथा हल-मूसल विराजित होते हैं। तीनों देवविग्रहों को रेशमी वस्त्रों तथा स्वर्णाभूषणों से आभूषित किया जाता है।

यह कहा जाता है कि यह वेष अतिबड़ी सम्प्रदाय का बड़ा प्रिय वेष है। इस सम्प्रदाय के भक्त तथा महन्त इस वेष में प्रभु के दर्शन को अपना बड़ा भाग्य समझते हैं। श्रीमंदिर का प्रशासन प्रभुजी के इस वेष के लिए सारा आयोजन करता है।

आड़किआ वेष ठिआकिआ वेष से इसलिए भिन्न है कि आड़किआ वेष में कदम्ब पत्र का खोंसा टेढ़ा रहता है जबकि टिकाकिआ वेष में यह खोंसा सीधा रखा जाता है। आड़किआ वेष में देवी सुभद्र को किरीट नहीं पहनाया जाता जबकि ठिआकिआ वेष में उन्हें स्वर्ण किरीट पहनाया जाता है। दो आड़कनी मुँह की दोनों ओर सजाई जाती हैं। देवविग्रहों को घागड़ा माली, बरकोली माली, पद्ममाली, गिनिमाली और पदकमाली आदि कण्ठ के आभूषणों से सजाया जाता

है। जगन्नाथ और बलभद्र को लम्बे वस्त्र पहनाए जाते हैं जो पीठ के पिछले हिस्से तक लटके रहते हैं। श्रीमद्भागवत, पुराण और हरिवंश में भगवान विष्णु का वामन या दिव्य वामन रूप वर्णित है। इस अवतार में अपनी नाभि से उत्पन्न तृतीय पाद से भगवान वामन रूपी विष्णु ने दैत्य बलि को उसके सिर पर रखकर पाताल में प्रविष्ट कराया था। इस घटना की स्मृति में यह वेष वामनावतार का प्रतीक माना जाता है।

चालीस जीवन मूल्य

सत्य, अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शुद्धता, सन्तोष, आत्मसंयम, शास्त्राभ्यास, भगवद्भक्ति, आध्यात्मिक विवेक, अनासक्ति, आत्मानुशासन, इन्द्रिय निग्रह, सहिष्णुता, पवित्रता, क्षमा, साहस, करुणा, औदात्य, आर्जव, परमार्थ, अमानित्व, पाखण्ड से मुक्ति, परोक्ष निन्दा का अभाव, सीधापन, विनय भाव, सहनशीलता, सेवाभाव, सत्संगति, जप, ध्यान, अद्वेष, निर्भयता, स्थिर चित्तता, निरहंकार, मैत्रीभाव, उदारता, कर्त्तव्यनिष्ठा और धीरज।

लक्ष्मीनृसिंह वेष

कार्तिक मास के शुक्लपक्ष की चतुर्दशी तिथि को प्रभु जगन्नाथ का डालकिआ वेष होता है। यह वेष प्रभु की अवकाश नीति से लेकर बालभोग नीति तक रखा जाता है। इस अवसर पर प्रभु जगन्नाथ के मस्तक पर स्वर्ण केवड़ा खोंसा जाता है। प्रभु बलभद्र और देवी सुभद्रा वस्त्र निर्मित मुकुट पहनते हैं, जिसमें बेंत, जरी और फूल गूँथे रहते हैं।

दूसरों वेषों की तरह इस वेष में भी देवविग्रहों को समान स्वर्णालंकार पहनाए जाते हैं। प्रभु जगन्नाथ के हाथ में शंख चक्र और प्रभु बलभद्र के हाथ में हल मूसल रहते हैं। इस वेष के दौरान देवी सुभद्रा पर्याप्त मात्रा में स्वर्णाभूषण पहनती हैं और मस्तक पर स्वर्ण किरीट धारण करती हैं। इस वेष के खर्च की पूरी तरह जिम्मेदारी श्रीमंदिर के कर्तृपक्ष निभाते हैं।

इस अवसर पर प्रभु जगन्नाथ नृसिंह का रूप धारण करते हैं। स्कन्द पुराण के अनुसार एक बार प्रभु जगन्नाथ के एक ओजस्वी रूप ने राजा इन्द्रद्युम्न को चौंधा दिया। उन्होंने प्रभु से एक शांत रूप में प्रकट होने की प्रार्थना की। प्रभु के हृदयस्थल पर देवी कमला पद्मपुष्प के आसन पर प्रकट हुई। प्रभु जगन्नाथ जी आँखों से सूर्य और चन्द्र की तरह ज्योति का विकीरण होने लगा। उनके हाथों में दिव्य धुनर्बाण प्रकट हुए। चतुर्भुज जगन्नाथ के दूसरे दो हाथ दो पद्मपुष्प की तरह अपने जांघों पर विश्राम की स्थिति में रहे। देवी कमला के मुख के सौन्दर्य पर विमोहित होकर प्रभु ने

हास्यवृष्टि कर दी। प्रभु के मुख भाग पर अनेक तेजस्वी स्वर्णाभूषण तथा मणि मुक्ताएँ चमकने लगीं और प्रभु योगमुद्रा में आसीन हो गए। प्रभु बलभद्र अपने हल की शक्ति का प्रयोग करते हुए सहस्र फन वाले साँप का रूप धारण करके प्रभु जगन्नाथ के मस्तक पर छाया प्रदान करने लगे। प्रभु जगन्नाथ को इस तरह के रूप में प्रकट करते हुए देखकर इन्द्रद्युम्न ने परमानन्द प्राप्त किया।

यह विश्वास किया जाता है कि इस घटना की स्मृति में लक्ष्मीनृसिंह वेष सम्पन्न किया जाता है। परंतु श्रीमंदिर में कब से यह वेष प्रचलित होता रहा है, यह कहना मुश्किल है।

सेनापट्टवेष

रथयात्रा के दौरान श्रीजीउओं को इस वेष में सजाया जाता है। असंख्य भक्तों की मेली से शरीरों में कोई आँच न आए, इस उद्देश्य से विग्रहों के शरीर को कई सतह के वस्त्रों से सेवक लोग आच्छादित कर देते हैं। इसके बाद ही उन्हें लाखों जनता के समक्ष रथारोहण किया जाता है। इस वेष में प्रभुजी युद्ध क्षेत्र में यात्रा करते हुए एक सेनापति की तरह प्रकट होते हैं।

मकर चौरासी वेष

प्रतिवर्ष मकर संक्रांति के पहले दिन देवविग्रहों को इस वेष में सजाया जाता है।

पुष्याभिषेक वेष

श्रीमंदिर स्वत्वलिपि के अनुसार पौष मास की पूर्णिमा की तिथि पर प्रभुजी इस वेष पर प्रकट होते हैं। आवश्यक नीतियों के सम्पन्न होने के बाद इस वेष में विग्रहों को पर्याप्त स्वर्णाभूषणों से सजा दिया जाता है।

जिस साल कार्तिक मास के पञ्चक (शुक्ल एकादशी से पूर्णिमा तक) साधारण पाँच दिन के बजाय छः दिन होते हैं, उसी दिन मल की तिथि में ही प्रभु का नागार्जुन वेष होता है।

इस अवसर पर प्रभु जगन्नाथ को एक योद्धा के रूप में सजाया जाता है। ऐसा लगता है कि प्रभु जगन्नाथ अतीत में कभी पुरी में साहि-जात (Street Festivals) के दौरान नागा वेष पहने हुए लोगों के साथ कुछ करतब करने चले जाते हैं, यह वेष उसी की एक झलक है।

इस दिन प्रभु कमर में एक पट्टी बाँधते हैं, जो 'नागाताटी' कही जाती है। प्रभु अपने हाथों में धनुष, बाणों से भरा तुणीर, कटार, चाकू, बाघनखी और ढाल आदि अनेक अस्त्र-शस्त्र धारण करते हैं। ढाल, चाकू और कटार सोल से बनाए जाते हैं तथा धनुष और बाण बाँस से। बाघछाल, सींगड़ा और कालफी से प्रभु को सजाया जाता है। प्रभु बलभद्र इस समय हाथों में दो रूमाल (श्रीमंदिर में जिसे ओलमाला कहा जाता है) धारण करते हैं। प्रभु जगन्नाथ बाएँ हाथ में एक चाँदी का शंख और दाहिने हाथ में चक्र धारण करते हैं। प्रभु बलभद्र के बाएँ हाथ में हल और दाहिने हाथ में मूसल रहते हैं। दोनों देवविग्रहों को घागड़ माली, पद्म माली, हरिड़ाकण्ठी माली और बाघनखी माली आदि कण्ठाभूषण पहनाये जाते हैं। मालाएँ देवविग्रहों के पुरोभाग की रौनक खूब बढ़ा देती हैं। कमर पर ढाल बाँध दिया जाता है तथा चाकू, सींगा और कटार कमर के पिछले भाग में लटका

दिये जाते हैं। देवी सुभद्रा के मस्तक पर स्वर्ण किरीट तथा स्वर्ण मुकुट, कानों में स्वर्ण कुण्डल और कण्ठ में स्वर्ण हार विराजते हैं। चूँकि प्रभु जगन्नाथ के धनुष की दोनों ओर मयूर चन्द्रिकाएँ रखी जाती हैं, इसलिए इस वेष को कार्तिकेय वेष भी कहा जाता है। कुछ गवेषकों का कहना है कि भगवान परशुराम ने सहस्रार्जुन जैसे प्रबल प्रतापी राजा की हत्या की थी और शायद नागा वेष धारी परशुराम के द्वारा सहस्रार्जुन का अंत हुआ था। उसकी स्मृति वाले वेष का नाम नागार्जुन कहा गया है। महाभारत में कुन्तीपुत्र अर्जुन के साथ शिकारी के रूप में भगवान शिव के युद्ध का वर्णन है। हालांकि अर्जुन इस युद्ध में पराजित हुए थे, फिर भी उसकी वीरता और नम्रता से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने उसे कुछ दिव्यास्त्रों का उपहार दिया था। जिस तरह किरातार्जुन शब्द भगवान शिव के एक रूप का प्रतीक है, ठीक उसी तरह नागार्जुन शब्द भी भगवान शिव के उसी रूप का प्रतीक है। इस तरह श्रीमंदिर में शैव और वैष्णव धर्म का समन्वय हुआ है।

नवयौवन वेष

स्नान पूर्णिमा के दिन तीनों विग्रहों के स्नान के बाद प्रभु अणसर घर में रहते हैं। पन्द्रह दिनों को भक्तों के लिए प्रभु के दर्शन वर्जित हो जाते हैं। पन्द्रहवें दिन के अन्त के अवसर पर उनका जो वेष किया जाता है, वह वेष नवयौवन वेष से नामित किया गया है। चूंकि तीनों विग्रह एक लम्बी अवधि के बाद नई तरह तेजस्वी रूप से उद्भासित होते हैं, अत: इस वेष को नवयौवन वेष कहा जाता है। इस वेष के दौरान देवविग्रहों को रत्न सिंहासन पर आसीन नहीं किया जाता है। भाद्रव मास की शुक्ल द्वितीया तिथि को नेत्रोत्सव के समारोह के बाद ही देवविग्रहों को रत्न सिंहासन पर आसीन किया जाता है। इस वेष में एक झलक के दर्शन के लिए भक्त बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करते रहते हैं। नेत्रोत्सव में विग्रहों के नेत्रों का संस्कार प्राप्त आलेख शामिल है।

प्रतिवर्ष कार्तिक पूर्णिमा को यह वेष होता है। इस वेष को कुछ हद तक 'सोना वेश' का अनुरूप माना जाता है।

अतीत में ओड़िशा के राजा, महाराजा और सामन्त आदि श्रीमंदिर में आकर श्रीमंदिर में दारुब्रह्म के इस वेष के दर्शन करके परम संतोष प्राप्त करते थे और प्रभु के आगे नाना रत्नालंकार समर्पित करते थे। कार्तिक पूर्णिमा के दिन ओड़िशा के मयूरभञ्ज और पारलाखेमुण्डी के राजा इस वेष में प्रभु के दर्शन करते थे और पर्याप्त स्वर्णाभूषण उपहार के रूप में दिया करते थे।

कार्तिक पूर्णिमा के दिन प्रतिवर्ष अवकाश नीति के बाद विग्रहों को इस वेष में सजाया जाता है। पुष्पालक सेवक रेशमी वस्त्रों, स्वर्णाभूषणों और मणियों से देवविग्रहों को सजाते हैं। इस वेष के समारोह का पालन होने के बाद भक्तों को प्रभु के दर्शन करने की अनुमति मिलती है। इस वेष में भक्त प्रभु के पास अपनों को कृपापात्र समझते हैं। इस वेष में श्रीभुज, कदम्बमाली, बाहाड़ा माली, किरिट, हरिड़ा कदम्ब माली, श्रीपयर, ताबीज, बाघनखमाली, चन्द्र-सूर्य, श्रीमुखपद्म और त्रिशाखा आदि स्वर्णालंकार व्यवहार किए जाते हैं।

नवधा भक्ति

श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्म-निवेदन।

वामन वेष

श्रीमंदिर के पंचांग में मादलापंजी भाद्रव मास के शुक्लपक्ष की द्वादशी तिथि का एक महत्वपूर्ण स्थान है। यह भगवान वामन का जन्मदिवस है। प्रभु जगन्नाथ भगवान विष्णु के अवतार माने जाते हैं। भगवान विष्णु अपने पाँचवें अवतार में एक वामन या बौने के अवतार में अपने को प्रकट किये थे। पुराणों में वर्णित है कि इस दिन शुभ घड़ी में भगवान ने दिव्य, ज्योतिर्मय वामन का रूप धारण कर धरती पर अवतरण किया। अत: उपर्युक्त तिथि को भगवान वामन का पवित्र जन्मदिन बड़े उल्लास और समारोह के साथ मनाया जाता है और असंख्य भक्तों के सामने यह वामन वेष उपस्थापित किया जाता है।

दोपहर के धूप की दैनन्दिन नीति होने के बाद श्रीजगन्नाथ जी वामन वेष धारण करते हैं। श्रीजगन्नाथ को बौने का वेष, देवी सुभद्रा का साधारण वेष और प्रभु बलभद्र का राजकीय वेष इस अवसर पर दृश्यमान होता है। महाप्रभु जगन्नाथ के बाएँ हाथ में छाता और दाहिने हाथ में कुशवटु और गडु उन्हें एक नैष्ठिक ब्राह्मण का रूप देता है।

महाप्रभु जगन्नाथ के लिए आवश्यकीय सोना वेष पिछली रात को ही श्रीमंदिर के भण्डारगृह से बाहर निकाल दिये जाते हैं और मेकाप सेवक के तत्त्वावधान में

रखे जाते हैं।

पुन: आषाढ़ मास में रथयात्रा के दौरान रथारोहण करते समय भी भगवान जगन्नाथ भक्तों के सामने बौने के रूप में प्रकट होते हैं। प्रभु के विग्रह को इस तरह सजाया जाता है कि रत्न सिंहासन से अवतरण करते समय भक्तों को एक बौने का रूप दिखाई पड़े।

सान्ध्य वेष

रत्नसिंहासन के सामने के द्वार के खुलने तक तथा मध्यरात्र में भी प्रभु की कई नीतियाँ होती रहती हैं। निर्धारित सूची के अनुसार अलग-अलग दिनों में प्रभु को अलग-अलग वेषों से आभूषित किया जाता है। प्रात:काल में जब तीनों देवविग्रहों की पूजा की जाती है, तब भी प्रभु को सद्य: पके हुए भोग समर्पित किए जाते हैं। पूर्वाह्न 11 बजे फिर से देवविग्रहों को पूजा के साथ भोग समर्पित होते हैं। इसे भोगमण्डप समर्पण कहा जाता है। मध्याह्न धूप 12:30 बजे तथा सन्ध्या धूप शाम को 7 बजे से 8 बजे के अन्दर ही सम्पन्न होता है। कभी-अभी अनिवार्य कारण की वजह से इस में व्यतिक्रम की संभावना रहती है। प्रात: धूप के बाद विग्रहों को एक प्रकार के पाट वस्त्रों से और खण्डुआ पाट से सजाया जाता है।

सन्ध्या धूप से पहले अन्य एक प्रकार के पाट वस्त्रों से विग्रहों के सम्मुख भाग को सजाया जाता है। सप्ताह के वारों के आधार पर इन वस्त्रों के रंगों में विभिन्न आती है। रविवार को लाल वस्त्र, सोमवार को काली छींटों वाले श्वेत वस्त्र, मंगलवार को पञ्चवर्णो के वस्त्र, बुधवार को नीले वस्त्र, गुरुवार को पीले वस्त्र, शुक्रवार को श्वेत वस्त्र तथा शनिवार को काले वस्त्र धारण करने की यह व्यवस्था सान्ध्य वेष के नाम से परिचित है।

श्राद्ध वेष

साधारण मनुष्य की तरह प्रभु जगन्नाथ भी प्रतिवर्ष अपने पितृपुरुषों को दीपप्रदानपूर्वक श्राद्ध समर्पित करते हैं। मार्गशीर्ष मास की कृष्ण चतुर्दशी को पितृपुरुष अदिति कश्यप के लिए, अमावस्या के दिन दशरथ तथा कौशल्या के लिए तथा प्रतिपदा तिथि को वसुदेव, देवकी, इन्द्रद्युम्न और गुण्डिचा देवी के लिए भी दीपदान के साथ श्राद्धविधि सम्पन्न किया जाता है।

यह दीपों का उत्सव दीपावली से तीन दिनों तक चलता है। चूँकि प्रभु जगन्नाथ पितृपुरुषों को श्राद्ध देते हैं, इसलिए उन्हें विशेष लाबादा श्राद्धवस्त्र पहनने पड़ते हैं जो खास करके श्राद्ध के लिए उद्दिष्ट होते हैं। दीपों के इस उत्सव को 'देव दीपावली' कहा जाता है। इस अवसर पर पुष्पालक सेवक विग्रहों को नागपुर की साड़ियों और चादरों से विमण्डित करते हैं। ये वस्त्र श्वेत रंग के होते हैं, पर वस्त्रों की धारियाँ विभिन्न रंगों की दिखाई देती हैं। वस्त्रों के माप और किनारी के रंग निम्नलिखित प्रकार के है–

श्रीजगन्नाथ– श्वेत पाट वस्त्र, लम्बाई– 16 अथवा 18 हाथ, चौड़ाई– 5 हाथ, किनारी 1 फुट की होती है। इस वस्त्र की किनारी में कुम्भ लाल रंग के होते हैं।

श्रीबलभद्र– श्वेत पाट वस्त्र, लम्बाई– 14 हाथ, चौड़ाई– 4 हाथ, किनारी की चौड़ाई 1 फुट। इस वस्त्र की किनारी काले रंग की होती है।

श्रीसुभद्रा– श्वेत पाट वस्त्र, लम्बाई– 14 हाथ, चौड़ाई– 4 हाथ और पीली किनारी एक फुट चौड़ी होती है।

देवविग्रहों को एक चादर से मण्डित किया जाता है। मस्तक सूती कपड़े से ढाँप देते हैं। चादर श्रीभुज पर फैली रहती है। विग्रहों पर विमण्डित इन वस्त्रों को काई धड़िआ या नागपुरी वस्त्र कहा जाता है। इस श्राद्ध वेष में व्यवहृत स्वर्णाभूषणों में तड़गी, नलीभुजा, चन्द्र, सूर्य, कुण्डल, आड़कनी, हरिड़ा माली और अन्त:मकरपटी आदि प्रमुख हैं।

तड़प-उत्तरी वेष

देवविग्रहों के स्नान के समय वे जो वस्त्र पहनते हैं, उसे तड़प और उत्तरीय कहा जाता है। तीनों विग्रहों और प्रभु सुदर्शन के लिए कुल चार तड़पों का व्यवहार किया जाता है। परन्तु केवल दो उत्तरीयों का ही व्यवहार किया जाता है। स्नान के समय प्रभु जगन्नाथ और बलभद्र ही ये दोनों उत्तरीय धारण करते हैं।

टाहिआलागि वेष

रथयात्रा के दौरान जब देवविग्रहों को अपने-अपने रथ पर लाया जाता है, तब-तब देवविग्रह यह वेष धारण करते हैं। इस अवसर पर वे अपने मस्तकों पर सुन्दर-सुन्दर टाहिआ धारण करते हैं। टाहिआओं के द्वारा मण्डित इस वेष के एक झलक के दर्शन के लिए अयुतों की संख्या में भक्त बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा करते हैं। ये टाहिआएँ या मुकुट बेंत, बाँस, सोल और फूलों से बनाए जाते हैं। आकार में क्रमुक पत्रों की तरह ये टाहिआएँ छ: फुट ऊँची और साढ़े आठ फुट चौड़ी होती है। सोल से बने कदम्ब पुष्पों से मण्डित ये टाहिआएँ अत्यन्त आकर्षक लगती है।

चाचेरी वेष

माघ के मास में शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि से लेकर चतुर्दशी तिथि तक पाँच दिनों तक यह चाचेरी वेष श्रीमंदिर में प्रचलित दिखाई देता है। यह वेष मध्याह्न धूप के बाद ही सम्पन्न किया जाता है और भक्तों को प्रदर्शित किया जाता है।

इस वेष में देवविग्रहों को सर्वांग, माधवली और बोइरानी आदि नए आभूषणों से तथा विभिन्न प्रकार के स्वर्णाभूषणों से विमण्डित किया जाता है। इस के बाद श्रीदेवी और भूदेवी दक्षिण घर में अवस्थापित की जाती हैं। दोलगोविन्द, जो प्रभु जगन्नाथ की चलप्रतिमा है, श्रीदेवी और भूदेवी के साथ बाहरी देवली भोग का सेवन करते हैं और उसके बाद उन्हें रत्न सिंहासन के पास लाया जाता है। इस समय मुदिरस्त सेवक विग्रहों को प्रसाद लगाते हैं। केवल प्रभु जगन्नाथ को ही सिन्दूर और चन्दन लगाया जाता है। आरती के समय प्रभु को कर्पूर समर्पित किया जाता है। मुदिरस्त सेवक चंवर आलट कर सिंहासन से नीचे उतर आते हैं। देवविग्रहों को सिन्दूर लगाने के बाद दूसरे पूजक रत्नसिंहासन पर चढ़ जाते हैं और उन्हें प्रसाद लगाते हैं। अब पूजापण्डा श्रीदेवी और भूदेवी को आज्ञामालाओं से आभूषित करते हैं, जिन्हें अब देवविग्रहों से थोड़ी दूर में अवस्थापित किया जाता है। इसके बाद प्रसाद लागि, कर्पूर आरती, दुर्वाक्षत, सातवती, सञ्ज काहाली और वन्दापना आदि नीतियाँ चलती रहती हैं। इस वेष के दौरान जो प्रसाद या भोग समर्पित किया जाता है, उनमें बड़े और छोटे आरिशा पीठा, धउला, घिनाड़ी, मरिचिनड़ु खिरी आदि शामिल हैं। यह कहा जाता है कि इस

वेष में नेत्र अगर प्रत्यक्ष दर्शन करते हैं तो हृदय में अलौकिक आनन्द की अनुभूति होने लगती है।

चाचेरी का अर्थ होता है उत्सव और संगीत तथा नृत्य का आनन्दमय समारोह। दोल उत्सव या होली महोत्सव, जिसमें लोग एक-दूसरे पर रंग डालकर खेलते हैं, यह चाचेरी शब्द उसी प्रकार के समारोह से सम्बन्धित है। ओड़िआ भाषा के प्रसिद्ध महान कवि उपेन्द्र भञ्ज के काव्य में यह शब्द देखने को मिलता है।

गिरिगोवर्धन वेष

1947 से पहले भाद्रव मास के कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी की तिथि में प्रतिवर्ष प्रभु जगन्नाथ गिरिगोवर्धन वेष धारण करते थे। अपने हाथ में गोवर्धन पर्वत लिए प्रभु भक्तों के सामने प्रकट होते थे। श्रीमद्भागवत में एक कहानी है कि गोपपुर के अधिवासी प्रतिवर्ष भगवान इन्द्र की पूजा करते थे। परन्तु भगवान कृष्ण उन्हें इन्द्र की पूजा के बदले गोवर्धन पर्वत की पूजा करने का परामर्श दिया। इस प्रकार अपनी पूजा के व्यतिक्रम में क्रोधान्वित होकर इन्द्र ने गोपपुर में निरन्तर भयंकर और घनघोर संवर्तक नाम की वर्षा करनी शुरू कर दी। भगवान इन्द्र के भयंकर क्रोध के प्रभाव से गोपपुर को बचाने के लिए अधिवासियों ने कृष्ण से प्रार्थना की। भगवान कृष्ण ने अपने बाएँ हाथ की कनिष्ठ अंगुली से गिरि गोवर्धन को उठा लिया और उसके नीचे सभी को आश्रय दिया। इस तरह उन्होंने इन्द्र का गर्व तोड़ दिया था। अत: इस वेष में गोवर्धन पर्वत उठाए हुए प्रभु जगन्नाथ भक्तों के सामने प्रकट होते थे। परन्तु 1947 के बाद पुन: यह वेष सम्पन्न नहीं किया गया। परन्तु प्रभु कृष्ण और बलराम के रूप में प्रतिवर्ष एक बार जरूर प्रकट होते हैं।

"THE ART OF GIVING"

17th May 2013

One day, in 1969, very early in the morning, at about 5.00 A.M. a small boy, about 4 years old, could not understand why all of a sudden members in the family burst into a loud wail and looked crestfallen. Not knowing what to do and what not to do, the child looked inquiringly at the grief stricken faces. Soon he came to realize that his father had died, though the word death was beyond his understanding. His father had died in a tragic train accident leaving seven siblings and the widowed wife behind. The youngest sibling was about a month old and the eldest 17 years. The deceased father was a petty worker in an industry and had left no savings for the 8-member family to survive on.

All the siblings, including the small boy, had to grow up in the midst of severe poverty in a very remote village of Odisha in

India. The boy did odd menial jobs here and there voluntarily and helped her widowed.mother. The early childhood and fate forced the boy to fend for himself and was thus self-made right from the age of about 5 years.

He gave his mother the solace by wiping her tears and he gave his little sister the comfort of his lap to sleep on. By about 7 years of age the boy was already sharing his hard earned money from his work with classmates. He kept one rupee out of his wage earned for the day just to give tea and snacks to his four friends at a tea shop near the school where they studied. He also helped the village folks and friends by giving his time and energy to fetch groceries and provisions from the nearby market every now and then. ,

The boy grew up to be a youth in due course. One day, while he was doing his Masters' Programme in Utkal University, Bhubaneswar, he gave away the 300 rupees given to him by his eldest brother for joining the college picnic to one of his friends who had no money and helped the friend to join the picnic while he himself stayed away from it.

After completion of his Master's Degree in Chemistry, this young man landed himself in a teaching job in a local college. Besides the job he did private tutoring and with the income.he supported his needy friends and his poor family members ignoring his own personal comforts (1987-1997).

This young man soon thought of and ventured to set up two institutions with only **Rs. 5000/- (100 US$) in a rented building in 1992-93.** Today, while one of these institutions has become the most promising university of the country with 21000 students from across the globe, the other institution has become the beauty of the world which nurtures and gives a decent life to twenty thousand poor indigenous children of the country providing free education from Kindergarten to Post graduation and professional

education with fully free residential and boarding facility.

The small institute that started with only 100 USD in 1992 has been instrumental in giving smiles directly and indirectly to 1 million people today and looks forward to giving smiles to 10 million faces by 2020.

He has also given back to his remote village turning it into a model village having all city amenities. He has also greatly contributed towards enriching art, culture, films, literature, spiritualism and many other fields. He has been giving financial assistance every month to around 40 poverty stricken school friends and has given employment to another forty of his friends in his two institutions.

The same person, after creating so much for the society and people and after achieving so much, lives the simplest-of-the-simple life in a. two-room rented house without anything in his bank account and has chosen to remain a bachelor. His only hobby is to bring smile to faces of thousands of poor children irrespective of cast, creed and religion.

This young man passionately believed in the term **"The Art of Giving"** which he propagated on 17th May, 2013.

As such, this boy of yester years who has now grown big in stature, gives credit for all of his above accomplishments to the **"The Art of Giving",** which he had silently learned since his childhood.

He is none other than **Achyuta Samanta** (www.achyutasamanta.com) the visionary social entrepreneur, social worker, educationist and the Founder of **KIIT** (www.kiit.ac.in) & **KISS** (www.kiss.ac.in), **the KISS Foundation India and the KISS Foundation U.K.**